कविता संग्रह

अनाहूत

डॉ. कुँवर वीरेन्द्र विक्रम सिंह गौतम

अनाहूत (कविता संग्रह)

प्रथम संस्करण : 1999
इलैक्ट्रानिक संस्करण : 2020

प्रकाशक एवं मुद्रक
डॉ. कुँवर वीरेन्द्र विकम सिंह गौतम

ANAHOOT (Kavita Sangrah)
By : Dr. Kunwer Virendra Vikram Singh Gautam

निवेदन

अपनी कृतियों के प्रति रचनाकार के हृदय में स्नेह स्वाभाविक है। इसके बावजूद गत 50 वर्षों में जो कुछ भी लिख सका, उसे करीने से सम्हाल नहीं सका। परिणाम स्वरूप अनेक रचनाएं काल के प्रवाह के साथ बह कर विस्मृति के सागर में समा गईं। हास्य–व्यंग्य की रचनाओं की एक डायरी किसी मित्र की विशेष अनुकम्पा की भेंट चढ़ गई। इसका कारण समयाभाव अथवा कार्यक्षेत्र की विषमताओं से अधिक मेरा आलस्य ही रहा जो हमेशा एक हिमालय बन कर मुझे रोकता रहा।

मेरी ऐसी प्रकृति से परिचित मित्रों और स्वजनों के दबाव का परिणाम बन कर 1992 में सामने आया – ''ख़त आषाढ़ के'', जो मेरी कुछ कविताओं और ग़ज़लों का एक ऐसा संकलन था जिससे उन्हें किंचित सन्तोष मिला होगा, परन्तु मैं असन्तुष्ट रहा।

*विषयानुकूल और विधानुकूल रचनाओं की अलग–अलग सम्पूर्ण प्रस्तुति का विचार इस असन्तोष का कारण बना और **अनाहूत, बबूलों के तले** और **कुएँ में भाँग** क्रमशः सम्पूर्ण कविता संग्रह, ग़ज़ल संग्रह और हास्य–व्यंग्य रचनाओं के संकलन के रूप में 1999 में तैयार हुए। सम्पूर्णता का विचार करके ही **अनाहूत** में उन कविताओं को भी शामिल किया था जो **ख़त आषाढ़ के** में प्रकाशित हो चुकी थी। 1992 में प्रकाशित **ख़त आषाढ़ के** और 1999 में मुद्रित **अनाहूत** की प्रतियों की अनुपलब्धता इस इलैक्ट्रानिक संस्करण की प्रस्तुति का मुख्य कारण है।*

मुख्य रूप से अगली पीढ़ी को समर्पित–

– डॉ. कुँवर वीरेन्द्र विक्रम सिंह गौतम

दिनांक : 22 *जून*, 2020

अनुक्रम

खण्ड 1 (आस्था के दीप)

खण्ड 2 (पथाकर्षण)

खण्ड 3 (विकर्षण)

खण्ड 4 (राग–अनुराग)

खण्ड 1
आस्था के दीप

शुभ्र स्वरूपा! ज्ञानदा!

शुभ्र स्वरूपा! ज्ञानदा!
माता वीणापाणि!
हंसवाहिनी आपको
शत–शत करूँ नमामि।

करें अनुग्रह विश्व पर,
कृपाकारिणी आप,
बुद्धि विमल कर दीजिए,
भव विदारिणी आप।

अक्षयकोष से बाँटिए,
मुक्त–हाथ से ज्ञान,
आत्मज्योति जागे सहज,
ऐसा दें वरदान।

धवल–कीर्ति–युत, शारदा,
श्वेताम्बरा सुजान,
रूप आप सद्ज्ञान का,
हृदय समाएँ आन।

...

वीणा मधुर बजाती

वीणा मधुर बजाती,
मम–मानस में आओ माँ! तुम सप्तसुरों में गाती।

माँ! हम बालक तेरे, ज्ञान के इच्छुक,
ज्ञान–दान दे, खड़े द्वार पर भिक्षुक,

बुद्धि–गगन पर आओ माँ! तुम ज्ञान–सुधा बरसाती,
मम–मानस में आओ माँ! तुम सप्तसुरों में गाती।

माँ! विशेष अनुराग हृदय में जागे,
जीवन–पथ पर रहो सदा संग आगे–

अंधकार से भरे जगत में, सही मार्ग दर्शाती,
मम–मानस में आओ माँ! तुम सप्तसुरों में गाती।

माँ! स्वीकार करो सेवा में मुझको,
निज मन्दिर का बना पुजारी मुझको,

नित्य आरती करूँ तुम्हारी, जला नेह की बाती,
मम–मानस में आओ माँ! तुम सप्तसुरों में गाती।

...

वीणा पुनः झंकार दे

आज वीणावादिनी! वीणा पुनः झंकार दे।

दे बहा धरती पे निर्झर–
ज्ञान की पीयूष धारा,
छेड़ वह शुचि राग, हो जाए–
विमोहित विश्व सारा,

डूबते अज्ञान–तम के सिन्धु में हम, पार दे,
आज वीणावादिनी! वीणा पुनः झंकार दे।

हों विमल वाणी से हम,
निर्मल हृदय भी हो हमारा,
खिल उठें अरविंद मानस में
तेरा पाकर इशारा,

शाश्वत स्नेह का प्रसाद दे, सुविचार दे,
आज वीणावादिनी! वीणा पुनः झंकार दे।

भाव नूतन, राग नूतन,
औ' हमें नूतन गिरा दे,
परस्पर अनुराग जागे,
नवलतामय तू धरा दे,

घोल जीवन में नवल रसधार, हे माँ शारदे!
आज वीणावादिनी! वीणा पुनः झंकार दे।

...

यह देश हमारा

अखिल विश्व में सबसे सुन्दर है यह देश हमारा।

उत्तर में गिरिराज प्रखर
है प्रहरी शुचि–आलय का,
शुभ्र मुकुट–सा दीप्त हमेशा
मस्तक हिम–आलय का,

धन्य हो रहा दक्षिण में
सागर धोकर इसके पग,
बिखरी सुषमा कण–कण में
पुलकित करती है रग–रग,

अरुणोदय इसका मनमोहक, सूर्यास्त भी न्यारा,
अखिल विश्व में सबसे सुन्दर है यह देश हमारा।

सरयू, रावी, ब्रह्मपुत्र,
नर्मदा और कावेरी,
महानदी, माही, तुंगभद्रा,
पावन यही त्रिवेणी,

सिंधु, घाघरा और गोमती
की पावन धाराएँ,
कृष्णा, गोदावरी आदि से
सिंचित सभी दिशाएँ,

सदियों से बह रही यहाँ गंगा–यमुना की धारा,
अखिल विश्व में सबसे सुन्दर है यह देश हमारा।

आदिकाल से इसने पाया
सरस्वती का प्यार,
इसी भूमि पर लेते आए
हैं ईश्वर अवतार,

विजयी गुप्त, अशोक और
गौतम, गॉधी की धरती,
सुजला, सुफला इसकी माटी
दम वीरों का भरती,

ईश्वर से भी पहले अर्पित इसको नमन हमारा,
अखिल विश्व में सबसे सुन्दर है यह देश हमारा।

▪▪▪

मेरा भारतवर्ष

पर्वतराज मुकुट है जिसका, चरण धो रहा सिन्धु सहर्ष,
ऋषियों की प्रिय भूमि रही जो, वह है मेरा भारतवर्ष।

राम–कृष्ण का रूप रचाकर
यहाँ स्वयं विचरे हैं ईश,
देव–भूमि यह पुण्यथली,
जिसमें रहते साक्षात गिरीश,

प्रथम ज्ञान पाकर इसने ही,
फिर जगती को ज्ञान दिया,
दे दधीचि ने अस्थिदान,
मर मिटने का उत्साह दिया,

जहाँ धर्म ने जन्म लिया, पाया मानवता ने उत्कर्ष,
ऋषियों की प्रिय भूमि रही जो, वह है मेरा भारतवर्ष।

यहाँ शब्द गूँजे कबीर के,
हुआ सूर–स्वर उद्घोषित,
तुलसी–सुधा बही निर्झर,
मीरा के भजन हुए पोषित,

लोहा माना है पश्चिम ने,
युग–युग से इसकी मति का,
शान्ति–हेतु अनुसरण किया है,
सबने इसकी संस्कृति का,

आदिकाल से सत्य–हेतु हो रहा यहाँ चिंतन–संघर्ष,
ऋषियों की प्रिय भूमि रही जो, वह है मेरा भारतवर्ष।

मुंदरी जैसी गोल धरा पर,
शोभित जैसे हीर–कनी,
राणा–शिवा–अशोक सरीखे,
कोटि सपूतों की जननी,

मानवता के आराधक,
गॉंधी–गौतम से सत्यवीर,
आजाद–भगत–बिस्मिल जन्मे,
जो त्याग गए हॅंसकर शरीर,

रवि समान दैदीप्यमान है इसके वीरों का आमर्ष,
ऋषियों की प्रिय भूमि रही जो, वह है मेरा भारतवर्ष।

उर में शोभित है सदियों से,
गंगा की अजस्त्र धारा,
कलुष हृदय का धो देती है,
सुर–सरि की पावन धारा,

प्रातः दिनकर सर्वप्रथम,
आकर करता है अभिनंदन,
कण–कण में बिखरी सुषमा,
आल्हादित करती है तन–मन,

चन्दन–सी महके रज जिसकी, नेत्र तृप्त हों पाकर दर्श,
ऋषियों की प्रिय भूमि रही जो, वह है मेरा भारतवर्ष।

...

संसार

रूप, यश, सुख, पुत्र, धन और कामिनी,
ये सभी एक साथ इस संसार में,
हैं नहीं मिलते, क्यूँ रोते हैं भला,
जानकर भी लोग इस संसार में?

दुःख मिलेंगे अनगिनित यह सोचकर,
तैरना जो छोड़ते मझधार में,
क्या कभी मंजिल उन्हें मिल पाएगी,
हार यूँ स्वीकार कर संसार में?

है तराशा जब गया हीरा कोई,
या तपा सोना प्रखर अंगार में,
तब निखरता रूप है उनका कहीं,
तब बने बहमूल्य वे संसार में।

क्या उसे अधिकार है – क्यूँ वह जिए?
प्रेम है जिसको नहीं संसार में–
राष्ट्र से, निज संस्कृति और सत्य से,
है धरा का बोझ वह संसार में।

...

ज़िन्दगी

फूल क्या!– जिसकी न ख़ुश्बू साँस को भाए कभी,
वह नज़र क्या!– जो किसीको खींच न पाए कभी,
ज़िन्दगी यूँ भी गुजर सकती है सबकी, पर नहीं–
ज़िन्दगी क्या!– जो किसी के काम न आए कभी!

आँख क्या!– जो बादलों सी हर घड़ी रोती रहे,
वह गिरा क्या!– जो घृणा के बीज ही बोती रहे,
लाख हो लंबी बहुत, कुछ मूल्य पर उसका नहीं,
ज़िन्दगी यदि हर घड़ी ही मौत से डरती रहे।

ज्योति वह– तूफान के झोंके में जो जलती रहे,
जो अँधेरी रात में राही का दम भरती रहे,
ज़िन्दगी वह– मुश्किलों में जो न घबराए कभी,
ज़िन्दगी वह– सहज ही काँटों में जो खिलती रहे।

...

हँस कर मिला करो

कह रहा पुष्प यह– 'काँटों में भी खिला करो,
भौंरे से निष्ठुर प्रेमी से मत गिला करो,
सर्वस्व लुटाते चलो नित्य जीवन–पथ पर,
अपने हों या बेगाने, हँस कर मिला करो।'

कोयल कहती है– 'जीतो मृदु वाणी से जग,
दो बोल जिधर, खिंच चले उधर को ही हर पग,
सुर लहरी तेरी गूँजे यूँ हर कानों में,
चन्दन की शीतलता से भर जाए रग–रग।'

है हरी दूब सिखलाती– 'तुम झुकना सीखो,'
सरिता कहती– 'मत रुको कहीं, बढ़ना सीखो,'
कह रहे सुनो पत्थर हमसे क्या राहों के–
'पग–पग पर मिलती ठोकर को सहना सीखो।'

...

महिमामय गणतंत्र!

महिमामय गणतंत्र! तुम्हारा अभिनंदन।

तुम आए गत हुई निशा,
हुआ जागरण दिशा–दिशा,
नूतन किरणों की वर्षा,
लेकर आई है ऊषा,

खिले सुमन, कूकी कोयल,
मुक्त वायु बह रही चपल,
जनजीवन में है हलचल,
जागा है उत्साह प्रबल,

एक्य–भाव मजबूत हुए, जागा जन–मन,
महिमामय गणतंत्र! तुम्हारा अभिनंदन।

तुमसे ही नव आश मिली,
नए हर्ष की लहर चली,
संस्मृतियों की कली खिली,
देश–प्रेम की ज्योति जली,

बलिदानों का तुम दर्पण,
मर मिटने का आकर्षण,
तेरी रक्षा अपना प्रण,
तुझ पर तन–मन–धन अर्पण,

^ *राष्ट्र–भाल पर चमक रहे बन यश–चन्दन,*
महिमामय गणतंत्र! तुम्हारा अभिनंदन।

...

मेघा–मेघा! पानी दे

मेघा–मेघा! पानी दे, आकर झड़ी सुहानी दे।

सागर की सैय्या तज कर,
आओ वाष्प–रूप धर कर,
बरसो जगती पर निर्झर,
सुधा–दान हे दानी! दे।

मेघा–मेघा! पानी दे, आकर झड़ी सुहानी दे।

पीउ–पीउ चातक रटता,
सूख रही जल बिन सरिता,
वृक्षों की लख पाण्डुरता,
नई चुनरिया धानी दे।

मेघा–मेघा! पानी दे, आकर झड़ी सुहानी दे।

विहँसे पग–पग हरियाली,
पुष्प लदी डाली–डाली,
माँग रही कोयल काली,
पावस–गीत निशानी दे।

मेघा–मेघा! पानी दे, आकर झड़ी सुहानी दे।

कमल कोष अपना खोले,
भ्रमर मुग्ध होकर डोले,
कण–कण हँस–हँसकर बोले,
सबको नई जवानी दे।'

मेघा–मेघा! पानी दे, आकर झड़ी सुहानी दे।

...

सघन मेघ घिर आए

सघन मेघ घिर आए।

भीगी मिट्टी सोंधी–सोंधी,
गंध बह रही है मारुत संग,
नृत्य कर रहे नभ पर बादल,
भू पर मोर थिरकते संग–संग,

सबके मन हर्षाए,
सघन मेघ घिर आए।

श्यामल मेघ झुके आते हैं,
धरती का आँचल छूने को,
चातक ने मुँह खोल दिया है,
स्वाति की बूँदें पीने को,

तरुण हृदय भरमाए,
सघन मेघ घिर आए।

रिमझिम का संगीत लग रहा,
प्रकृति नटी की जैसे पायल,
किए प्रकृति श्रृंगार, गाए मल्हार
डाल पर बैठी कोयल,

मोहक राग सुनाए,
सघन मेघ घिर आए।

...

आ गया रिमझिम बरसता

आ गया रिमझिम बरसता चर वरुण का।

ढक गया आकाश काले कम्बलों से,
झर रही जीवन–सुधा फिर बादलों से,
वर्ष भर के बाद लौटे पाहुने फिर,
मिल रहे हैं अचल शिखरों के गले से,

खो गया है भीड़ में रथ भी अरुण का,
आ गया रिमझिम बरसता चर वरुण का।

खो गए हैं अलि कली के अंक में,
बूँद सोयी सीप के पर्यंक में,
गूँज कानों में उठा पिक–स्वर मधुर,
थिरकते हैं रंग तितली–पंख में,

बह रही है वायु लेकर बल गरुण का,
आ गया रिमझिम बरसता चर वरुण का।

खिल उठी सुषमा सुहानी भोर है,
रस पगा धरती का हर एक पोर है,
खिल उठे कचनार, पग–पग झूलती,
व्योम से भू तक रसीली डोर है,

जल गया मधुदाह से अन्तर तरुण का,
आ गया रिमझिम बरसता चर वरुण का।

...

उमड़–घुमड़ कर मेघदूत घिर आए

उमड़–घुमड़ कर मेघदूत घिर आए।

रिमझिम–रिमझिम बरस रहे हैं जलकण,
झूम–झूम सिर हिला रहा है तृण–तृण,
षटपद गाते गीत, महकते रज–कण,
कानन में कर रहे पीउ चातक गण,

सौदामिनी दमकती शोर मचाए,
उमड़–घुमड़ कर मेघदूत घिर आए।

तिरते सोनबलाक व्योम पर ऊँचे,
मधुमाए हैं सारे बाग–बगीचे,
हरियाई हर बेल, खिले नव गुंचे,
धुल कर स्वच्छ हुए गिरि–वृक्ष समूचे,

प्यारे ताल–तलैया फिर हर्षाए,
उमड़–घुमड़ कर मेघदूत घिर आए।

उड़ी गगन में ऊँची सजल पतंगें,
पवन इन्द्रधनु–झूले में ले पेंगें,
भानु–अंशु छू जागी नवल तरंगें,
विहँस उठी सुमनों पर बिखरी बूँदें,

अचला–आँचल में समीर लहराए,
उमड़–घुमड़ कर मेघदूत घिर आए।

...

घिरी घटा घनघोर

व्योम मध्य घिर उठी घटा घनघोर।

दफ्न हो गई ग्रीष्म, तृप्त हो गई धरा,
धरती का आँचल निखरा हो हरा भरा,
टप–टप का संगीत सतत् करता बहरा,
है मारुत–स्पर्श सुखद अनुभूति भरा,

रसासिक्त है धरती का हर पोर,
व्योम मध्य घिर उठी घटा घनघोर।

तृप्त हो गए हैं सरिता के दोनों कूल,
खड़े हुए तरु नव–पल्लव के ओढ़ दुकूल,
कलि संग भँवर डाल रहे आ–आकर अलि,
महक उठे कचनार, लगे जलने शाल्मलि,

मेंहु–मेंहु कर थिरके वन में मोर,
व्योम मध्य घिर उठी घटा घनघोर।

सजे तड़ाग जलज पँखुरी में भर कर,
लसे बिन्दुफल कमल–पँखुरी के ऊपर,
मुग्ध हो गए चातक–गण लखि मेघ– वदन,
बाँध लिया है पिकस्वर के जादू ने मन,

महकी माटी होकर हर्ष विभोर,
व्योम मध्य घिर उठी घटा घनघोर।

पाकर नव जल–प्राण उफन आई सरिता,
दमक दामिनी भरने लगी हृदय–दृढ़ता,
जल–थल एक हुआ, न बाकी रहा फरक,
जगती तल से लेकर के गगनांचल तक,

बॉंधी जलधर ने रसभीनी डोर,
व्योम मध्य घिर उठी घटा घनघोर।

...

आई मधुऋ्तु, आए बादल

आई मधुऋ्तु, आए बादल।

लखि श्याम वदन प्रिय जलधर का,
लज्जित हो ग्रीष्म हुआ बौना,
साधना फली, अंततः हुआ,
चातक की साधों का गौना,

फिर थिरका रिमझिम पावस जल,
आई मधुऋ्तु, आए बादल।

तट चूम सकुल सरिता गाती,
कल–कल–छल–छल का सिक्त गान,
प्रिय सिन्धु मिलन को चली मगन,
पाकर मधुऋ्तु से मधुर दान,

मग–अवरोधों पर उछल–उछल,
आई मधुऋ्तु, आए बादल।

लेने अमन्द मकरन्द भ्रमर,
आ बैठे पंकज–कोषों में,
क्रीणारत सोनबलाक मुग्ध,
लुकते छिपते घन–केशों में,

विकची कलियॉं, झरता परिमल,
आई मधुऋ्तु, आए बादल।

भीगी मृत्तिका गंध देती,
कण–कण बिखरा है गंधसार,
मादक–शीतल यह अनिल–परस,
व्याकुल मन करता बार–बार,

यौवन अन्तर में पड़ा मचल,
आई मधुऋतु, आए बादल।

...

आ गया मधुमास

कह रही कोयल कुहुक लो आ गया मधुमास,
डूब कर सुख–सिन्धु में सब कर रहे हैं हास।

नए पल्लव से लदी हैं,
डाल–डाली सब यहाँ,
रोकना मुश्किल नज़र को,
अब यहाँ तो अब वहाँ,

प्रेम में अनुराग इतना
बढ़ गया मधुमास में,
मिलन की खातिर झुकी
जाती हैं भू पर डालियाँ,

क्षितिज तक छाया हुआ है प्रेम और उल्लास,
कह रही कोयल कुहुक लो आ गया मधुमास।

कर रहा अठखेलियाँ,
शीतल मदिर समीर,
मदन पीड़ित हैं सभी,
किसके हृदय में धीर?

लिपट तरु से कही
लतिका मुस्कुराती है,
कही अलि पर है लुटाती
नवकली उर–नीर,

हँस रही नीचे धरा, ऊपर धवल आकाश,
कह रही कोयल कुहुक लो आ गया मधुमास।

...

आया वसंत

पंछी चहके, कलियाँ महकी, सर्दी का लो हो चला अंत,
स्वागत में कण–कण झूम उठा, मच गया शोर आया वसंत।

सरसों के पीले फूलों की,
चादर खेतों में फैल रही,
यह मतवाली मदमस्त पवन,
डाली–डाली से खेल रही,

गाता अम्बर दे ताल,
साथ में धरती भी है झूम रही,
बागों में भँवरों की टोली,
फूलों के ऊपर घूम रही,

प्राणों में अमृत घोल रहा, कोयल का सुन्दर मधुर कंठ,
स्वागत में कण–कण झूम उठा, मच गया शोर आया वसंत।

है गंध मदिर फैली ऐसी,
मानो फूटी रस की गागर,
ज़र्रा–ज़र्रा है मस्त आज,
मस्ती का है फैला सागर,

आकाश हुआ है सतरंगा,
उल्लास लिए कोयल का स्वर,
नभ से बरसाया है किसने,
धरती पर रंग पीत हँसकर!

सब झूम रहे हैं साथ–साथ, क्या राजा और क्या आज रंक,
स्वागत में कण–कण झूम उठा, मच गया शोर आया वसंत।

...

फिर वसंत आया

फिर वसंत आया देखो महि–ऑगन में।

है तोड़ रहा दम शिशिर,
जन्म ले रहा ग्रीष्म,
है जन–जन में उत्साह–
प्रबल, उल्लास भीष्म,

है लुटा रही निज सौरभ
हर कलि मारुत पे,
बरबस पाकर स्पर्श
सिहर जाता है नीम,

वनप्रिय का स्वर गूँज रहा है कानन में,
फिर वसंत आया देखो महि–ऑगन में।

नव पल्लव से हैं सजे,
पुराने वोधि–वृक्ष,
हैं घूम रहे अलि
पुष्पों पर ले आर्द्र वक्ष,

ले रहे जन्म बागों में
देखो नव प्रसून,
हरियाली पूरित हैं
धरती के सभी कक्ष,

छलक रहा उत्साह सरस अलि–गुन–गुन में,
फिर वसंत आया देखो महि–आंगन में।

अचला निज आँचल
पीत–रंग में डुबो रही,
बनी सुहागन नई
वधू–सी सँवर रही,

विहंग दुंदुभि बजा–
रहे हैं स्वागत में,
देख कुँवारी कली
हृदय में विहँस रही,

हैं वासंती गीत सभी के आनन में,
फिर वसंत आया देखो महि–आँगन में।

...

चलो मनाएँ होली

चलो मनाएँ होली।

निकलो घर से छोड़ बिछौना,
आया है त्योहार सलोना,

प्रेम–रंग से आओ रंग दें
आज तुम्हें हमजोली,
चलो मनाएँ होली।

कू–कू कोयल बोल रही है,
अमृत दिल में घोल रही है,

सबसे मीठी "बुरा न मानो–
होली है"– यह बोली,
चलो मनाएँ होली।

खुले हजारों फौवारे हैं,
सरस रंग की बौछारें हैं,

घन–गुलाल उड़ चलें, खोल दो–
रंग–अबीर की झोली,
चलो मनाएँ होली।

बच कर जाने न पाएँगे,
रंगों से हम नहलाएँगे,

शोर मचाती, मोद मनाती,
घूम रही हर टोली,
चलो मनाएँ होली।

मिल–जुल कर सब मोद मनाएँ,
ऊँचे स्वर में फाग सुनाएँ,

राग–द्वेष, मतभेद, स्वार्थ की–
आज जला कर होली,
चलो मनाएँ होली।

...

पर्व नए ढंग से मना लो

पर्व नए ढंग से मना लो।

दूर करो मन का हर भार,
ताक धरो भाषा– तकरार,

आज दिल अपने मिला लो,
पर्व नए ढंग से मना लो।

आपस की कटुता त्योहार में,
धो डालो रंग की बौछार में,

मिलजुल कर आज मुस्कुरा लो,
पर्व नए ढंग से मना लो।

फोड़ो स्नेह की गगरिया,
मन की झीनी चदरिया,

प्रेम–रंग में रंगवा लो,
पर्व नए ढंग से मना लो।

कल–सा न आज बीत जाए,
कोई अकेला न गीत गाए,

होली–गीत साथ गुनगुना लो,
पर्व नए ढंग से मना लो।

अहा!मधुर ऋतु आई

अहा! मधुर ऋतु आई।
फागुन के आते ही देखो शाख–शाख बौराई।

छलक रहा सौरभ सुमनों से,
शीतल वात महकती,
झूम रहे हैं चना–मटर,
तीसी की पायल बजती,

लदी डालियाँ नव–पल्लव से,
विकच रही हैं कलियाँ,
पीत वसन ओढ़े मदमाती,
विहँस रही हैं कलियाँ,

छेड़–छेड़ कर मस्त झकोरे जगा रही तरुणाई,
अहा! मधुर ऋतु आई।

दूर–दूर तक रसासिक्त
देखो विस्तार गगन का,
दिग–दिगंत रस–रंग सने
और अमलतास आंगन का,

कुहक रही है जीवन–कोकिल,
राग सुनाते भौंरे,
स्नेह–सलिल से भीग रहा है
पोर–पोर जीवन का,

फिर भू पर ऋतुराज पधारे, शोर करे पुरवाई,
अहा! मधुर ऋतु आई।

...

जंगल सघन और फलदार

करें प्रदूषण का प्रतिकार,
जंगल सघन और फलदार।

हुई हस्तगत जो हमको,
वन–संपदा मनोहर है,
लेकिन निज संपत्ति नही,
यह तो मात्र धरोहर है,

अगली पीढ़ी का अधिकार,
जंगल सघन और फलदार।

जो विनाश का कारक है,
उस विकास पर रोक लगे,
मानव का कल्याण तभी,
जब उसमें यह बोध जगे,

काटो करके सोच–विचार,
जंगल सघन और फलदार।

वसुधा की उजड़ी गोदी
मांग रही प्रत्यावर्तन,
पर्यावरण गुहार रहा,
करो वनों का संवर्धन,

जीवन का है मूलाधार,
जंगल सघन और फलदार।

...

आओ ऐसे दीप जलाएँ

आओ ऐसे दीप जलाएँ अंतरतम जगमग हो।

प्रेम–दीप–लौ चढ़ कर नभ तक ऊँचे,
थिरक–थिरक बिखराए कनक उजाला,
नभ की तारावलियाँ शर्मा जाएँ,
देख हृदय में ऐसा अद्‌भुत मेला,

बंधें परस्पर प्रेमसूत्र में, एक हृदय, एक पग हो,
आओ ऐसे दीप जलाएँ अंतरतम जगमग हो।

जन जीवन में गूँज उठे फिर से अब,
सत्यं–शिवं–सुन्दरम का फिर वन्दन,
मन–उपवन में खिलें दीप बन कलियाँ,
महक उठे मधुवन–सा अपना नन्दन,

मधुमय जीवन–घट हो सबका, आलोकित हर मग हो,
आओ ऐसे दीप जलाएँ अंतरतम जगमग हो।

...

दीप! सतत् जलते रहना

दीप! सतत् जलते रहना।

अभी अधूरा व्रत तेरा,
घटा नहीं तम का घेरा,
दारुण तम दलते रहना,
दीप! सतत् जलते रहना।

तमावृत अंधे जग में,
विकल बटोही के मग में,
किरण पुँज झरते रहना,
दीप् सतत् जलते रहना।

अपना स्नेह जलाकर नित,
जीवन भेंट चढ़ा परहित,
शुभ्र ज्योति भरते रहना,
दीप सतत् जलते रहना।

छिन्न करो छल की कारा,
अंतरमन जगमग सारा,
न्याय–नींव धरते रहना,
दीप! सतत् जलते रहना।

...

दीवाली पधारी है

दीपों की लड़ी पहन, दीप्त तारिका–सी आज,
आँगन में सबके दीवाली पधारी है,
छिन्न हुई कालिमा, मुखर ज्योति–लालिमा,
दीप–राशि लुटा रही जगती हमारी है,
खुशियों के दीप जले, मन में अनार खिले,
हर घर की चूड़ी ने आरती उतारी है,
तम के निदान हेतु, ज्योतित वितान हेतु,
स्वागत में सबने निज कुटिया सँवारी है।

छिटका है पग–पग पर नूतन प्रकाश–पुँज,
हर घर–आँगन प्रकाश से अलंकृत है,
हर दीवार स्वच्छ, द्वार–द्वार सजा हुआ,
ड्योढ़ी के आगे, आज अल्पनाएँ चित्रित हैं,
नगर–नगर, डगर–डगर, गाँव–गाँव, ठाँव–ठाँव,
अम्बर के तारक आज भू पर निमंत्रित हैं,
अमित उल्लास से प्रदीप्त हैं मुख आज सभी,
शोक विरत जन–जन के हृदय–तार झंकृत हैं।

...

आज सुनो क्या दीपक कहते

आज सुनो क्या दीपक कहते।
दीवाली के इस शुभ दिन पर, ये हमसे–तुमसे क्या कहते।

मैल स्वार्थ का जमा हुआ है,
जो मन पर सब उसे हटाएँ,
एक नज़र से सबको देखें,
परमार्थ को ध्येय बनाएँ,

द्वेष न रखें कभी किसी से, मिलें सभी से हँसते–हँसते,
आज सुनो क्या दीपक कहते।

चुन डालें सब काँटे पथ के,
निज कर से हर मार्ग सजाएँ,
भटक गए हैं जो राहों से,
उनको उनकी राह दिखाएँ,

ईश्वर से कम नहीं मनुज वे, जो दूजों का है दुःख हरते,
आज सुनो क्या दीपक कहते।

बैठ गए जो हार मान कर,
उनमें नव उत्साह जगाएँ,
ध्येयहीन अब और न भटकें ,
ठोस कदम कुछ आज उठाएँ,

दिखलाएँ दुःख में भी हँसकर, सुख में ही क्यों हैं हम हँसते,
आज सुनो क्या दीपक कहते।

दीवाली पर आज न केवल,
माटी के कुछ दीप जलाएँ,
जिस दिल में अँधियारा देखें,
उसमें आशा–दीप जलाएँ,

इस विधि पर्व मनाएँ हम सब, यह कहती लौ हिलते–डुलते
आज सुनो क्या दीपक कहते।

■ ■ ■

कोयला उद्योग हमारा है

श्रम–स्वेद बहाने में जिनको,
अपने जीवन का सार मिला,
उन कोयला खनिकों ने रखी,
हर सर्जन की आधारशिला।

भू–ताप थका कर हार गया,
पर थके नही श्रमवीर खनिक,
बाधाएँ कितनी भी आएँ,
हौसले न होते पस्त तनिक।

इनके मजबूत इरादों को,
न तोड़ सके भू के पत्थर,
ये नव–भारत के भागीरथ,
काले हीरे के सौदागर।

उद्योग राष्ट्र के स्पन्दन,
इनकी ऊर्जा से ही करते,
इनके बलबूते पर ही तो,
हैं सभी नियोजक दम भरते।

श्रम की पूजा करने वाले
श्रमवीरों ने उच्चारा है,
''कोयला खानों के हम कर्मी,
कोयला उद्योग हमारा है।''

...

सीमा के प्रहरी! सावधान!

सीमा के प्रहरी! सावधान!
छूने को आँचल जननी का, फिर आए हैं रिपु बेइमान।

जिस धरती पर तुम हो जन्मे,
जिस पर खेले और बड़े हुए,
हैं नज़र गड़ाए उस पर ही,
रिपु–दल सीमा पर खड़े हुए,

माता की लाज बचाना तुम,
कुछ ऐसा तेज दिखाना तुम,
नापाक इरादे दुश्मन के,
पल भर में ही हो जाएँ धुएँ,

जयघोष करो ऐसा जवान, रिपु क्या हिल जाए आसमान,
सीमा के प्रहरी! सावधान!

कितनों ने लहू बहाया है,
कितनों ने जान लुटाई है,
वर्षों तक लड़–लड़ कर हमने,
अपनी आजादी पाई है,

न छिन जाए फिर से हमसे,
धरती यह अमर शहीदों की,
ज़र्रे–ज़र्रे से, कण–कण से,
आवाज़ उभर कर आई है,

इस आज प्रलय की बेला में, तुम करना अपना रक्तदान,
सीमा के प्रहरी! सावधान!

दो याद दिला फिर निजबल से,
तुम भीम, शिवा और राणा की,
सर्वस्व दान कर जननी पर,
फिर याद दिला दो भामा की,

उस झाँसी वाली रानी की,
कौमी परवाने नाना की,
दो याद दिला फिर 'बिस्मिल' की
उस 'भगत सिंह' मर्दाना की,

दो प्यास बुझा माँ काली की, करवा बैरी का रक्तपान,
सीमा के प्रहरी! सावधान!

यह आज फैसला कर लो तुम,
मरना या मार गिराना है,
अतिक्रमण करी जिसने सीमा,
वह दुश्मन मार भगाना है,

तूफान घिरा है जो उससे,
अपना यह चमन बचाना है,
सिद्धांत अहिंसा का तज कर,
शंकर का रूप दिखाना है,

दुश्मन के ऊपर टूट पड़ो, तुम भूखे सिंहों के समान,
सीमा के प्रहरी! सावधान!

दे रही कसम तुमको गंगा,
कह रहा हिमालय खड़ा हुआ,
तिल भर पीछे न पग खिसके,
यमराज भले हो अड़ा हुआ,

यूँ ही लहराता रहे सदा,
ध्वज लाल किले पर गड़ा हुआ,
मत भूल हमारा मान–शान,
है साथ इसी के जुड़ा हुआ,

कह रहे राष्ट्र पर मिट जाओ, रामायण, गीता और कुरान,
सीमा के प्रहरी! सावधान।

...

जाग गया है करवट लेकर

चमक उठा है जनमानस में स्वतंत्रता का प्रखर दिनेश,
जाग गया है करवट लेकर सोया हुआ बॉंगला देश।

नई चेतना जाग उठी है
बंग–देश के दीवानों में,
मातृभूमि की लौ पर मर–
मिटने को तत्पर परवानों में,

महाक्रांति के लिए खड़े
रण–मत्त झूमते मस्तानों में,
रंग भर रहे जो निज ख़ूँ से
नित्य अमर नव–अफसानों में,

है असीम उत्साह हृदय में, भय का लेश न कहीं प्रवेश,
जाग गया है करवट लेकर सोया हुआ बॉंगला देश।

लाल हुआ आकाश, ज़मी–
सिहरी पिशाच बर्बरता से,
कायर हैं, प्रतिशोध ले रहे
हार का भोली जनता से,

चप्पा–चप्पा बना कर्बला
बंग–भूमि का, पशुता से–
शर्मिंदा इस्लाम हुआ है
पाक देश की लघुता से,

उलट गया है शासक मुख से कपटपूर्ण श्वेत परिवेश,
जाग गया है करवट लेकर सोया हुआ बॉंगला देश।

नवजागृति के महासिन्धु में
डूब रहा याहिया का ताज,
बचा न पाया, व्यर्थ रहा
सारा का सारा सैन्यसाज,
भय–कम्पित अरि–उर करता है
महाकाल का नाद आज,
वर्षों का कर्ज उतार रहे
बंगाल–वीर मय मूल–ब्याज,

पाक–साफ कर दो धरती को हर मुख देता है सन्देश,
जागा गया है करवट लेकर सोया हुआ बॉगला देश।

...

युवक भगीरथ!

ओ नवयुग के युवक भगीरथ!
उठो धरा पर सर्जन–सुर–सरिता लहराओ।

तुमसे आज तुम्हारी धरती,
मांग रही श्रम–स्वेद निवाला,
दहक रही इसके अंतर में,
क्षुधा–अनल की घातक ज्वाला,

बन घन–सघन उठो नभ तक तुम,
प्यासी धरती पर झुक, झूम सुधा बरसाओ।
ओ नवयुग के युवक भगीरथ!
उठो धरा पर सर्जन–सुर–सरिता लहराओ।

कर्म–सिन्धु में आज डूबकर,
नई सृष्टि रचनी है तुमको,
जिसकी निशा–दिवस हो स्वर्णिम,
दिशा–दिशा में सर्वोदय हो,

सुनो तकाजा आज समय का,
ओ युगशिल्पी! निर्माणों से ब्याह रचाओ।
ओ नवयुग के युवक भगीरथ!
उठो धरा पर सर्जन–सुर–सरिता लहराओ!

हर मुख भरा, खिला हर चेहरा,
चारों ओर दिखाई दे जब,
कर्मनिष्ठ! निज कर्म साधना,
सफलीभूत हुई मानो तब,

नई योजनाओं को जन्मो,
प्रगति राह आलोकित हो, श्रम–दीप जलाओ।
ओ नवयुग के युवक भगीरथ!
उठो धरा पर सर्जन–सुर–सरिता लहराओ।

...

जागो नवयुग के भगवान

उठो युवक! लो आज पुनः तुम निज बल को पहचान,
आह्वान करता हूँ, जागो नवयुग के भगवान।

कर्मभूमि में खड़ी समस्याएँ
तुमको ललकार रही हैं,
अधनिर्मित निर्माण–श्रृंखलाएँ
सब तुम्हें पुकार रही हैं,

पतझड़ एक चुनौती बनकर,
छा बैठा है आज चमन पर,
नई बहारों की आशा में,
कलियाँ तुम्हें निहार रही हैं,

नया रूप दो आज राष्ट्र को, तानो नया वितान,
आह्वान करता हूँ, जागो नवयुग के भगवान।

तुम्हें भँवर से ले जानी है,
आज नियोजन–नौका खेकर,
उतर पड़ो नैराश्य–अगम–
जलनिधि मे आशा–नौका लेकर,

जीवन–पथ पर बिखरे पाहन की–
ठोकर से हार न जाना,
गहन अंध में लक्ष्य मिलेंगे,
ढूँढ़ो श्रमवर्तिका जलाकर,

बंधा हुआ चरणों से तेरे है युग का सम्मान,
आह्वान करता हूँ, जागो नवयुग के भगवान।

महाकर्म का नाद फूँक कर,
हर दिल को एक नया जोश दो,
जीवन के विष की कटु हाला,
बन कर शम्भू आज घूँट लो,

डहक रही है रात अमा की,
नीरवता अट्टहास है करती,
भटक गया है कहीं सवेरा,
ढूँढ़ो उसको दिशाबोध दो,

तुम हो आगत के प्रतिनिधि, मन में रखो ये ध्यान,
आह्वान करता हूँ, जागो नवयुग के भगवान।

...

नमामि ग्राम देवता!

नमामि ग्राम देवता!

भू–पुत्र रहे अनजान सदा
तुम वैभव की परिभाषा से,
पर–सृष्टि–प्रसारण हेतु जिए
तुम मुक्त हो स्वार्थ पिपासा से,

जड़ में चेतन का समावेश
करते हो निज श्रम–माया से,
धनहीन तुम्हें है प्यार रहा
मिट्टी से, धरती माता से,

निज स्वेद लुटाकर धरती पर, तू स्वर्ण अपार बिखेरता,
नमामि ग्राम देवता!

खुद अर्धनग्न तुम घूम रहे,
औरों के तन को ढकने को,
कर रहे स्वयं आधा भोजन,
तुम हम सबका मुख भरने को,

पी रहे दृगों के ऑसू तुम,
औरों को खुशियॉ देने को,
गर्मी–वर्षा–पाला–ओला,
आते तेरी गति हरने को,

पर वीर! प्रकृति के भी ऊपर, है तेरी सिद्ध अजेयता,
नमामि ग्राम देवता!

तप–रत सन्यासी जैसे हो,
पर नही, कही उससे ऊँचे,
तेरा श्रम निज–हित हेतु नही,
उद्दृदेश्य तेरे उनसे ऊँचे,

मेरे गुलशन में फूल कई,
पर तुम सबसे सुन्दर गुँचे,
तुम कर्णधार नवभारत के,
तुममें ही राष्ट्र–गली–कूचे,

हल की नोकों से आगत के, तू सुन्दर चित्र उकेरता,
नमामि ग्राम देवता!

▪▪▪

ओ शिल्पी नवभारत के!

ग्रामयुवक! लिख हल की नोकों से
नवयुग की नव युग–गीता,
ऐसा चमन सजाओ जिसकी
हर ऋतु हो लगती परिणीता,
निर्झर स्वेद बहाकर अपना,
इस माटी को स्वर्ण बनाओ,
भारत–भाग्य विधाता हो तुम,
कोई पात्र रहे न रीता।

निज मन–वंशी पर सब मिलकर,
एक्य–भाव के गीत सुनाओ,
श्रम के बीज बिखेर धरा पर,
खुशियों के मधुपुष्प खिलाओ,
रह न जाए कहीं तिमिर की
लेशमात्र भी रे! परछांई,
खेतों और खलिहानों में,
निज पौरुष का दिनकर दमकाओ।

तुम नवयुग के वीर सिपाही,
तुम्हें दैन्यता से है लड़ना,
सुख–सन्तोष–राशि से सबके
रिक्त हृदय–कोषों को भरना,
तुम ही हो विश्वास देश का,
देखो यह विश्वास न टूटे,
ओ शिल्पी नवभारत के!
नवभारत का निर्माण है करना।

...

आगत का निर्माण करो

चलो बढ़ाओ कदम, प्राण–प्रण से जुटकर कुछ काम करो,
गत की मृदु–सुधियों से निकलो, आगत का निर्माण करो।

क्या कहता है वक्त सुनो,
अब तो आराम हराम हो,
स्वप्नों से सुख नहीं मिलेगा,
सिर्फ काम से काम हो,

काम नहीं अपने आएंगी
धर्मो–मजहब की बातें,
अपना श्रम हो खुदा हमारा,
ईशा हो और राम हो,

निज उन्नति के लिए उठो, किंचित मत अब विश्राम करो,
गत की मृदु–सुधियों से निकलो, आगत का निर्माण करो।

अलग–अलग बंट कर मत बैठो,
मिल कर एक ज़जीर बनो,
श्रम का सूरज रहे चमकता,
तुम ऐसी तदबीर बनो,

हर लोहा तुम स्वर्ण बना दो,
हाथों के श्रम–पारस से,
लिखो भाग्य अपने हाथों से,
तुम अपनी तकदीर बनो,

स्वार्थ–अलस की मदिरा त्यागो, निज जीवन निष्काम करो,
गत की मृदु–सुधियों से निकलो, आगत का निर्माण करो।

वही पहुँचता है मंजिल तक,
जो गिर कर भी रुका न हारा,
वही सफलता को वरता है,
जिसने माँगा नहीं सहारा,

संकल्पित कदमों के सम्मुख,
हर पर्वत हो जाता बौना,
लहरों के विजयी को होता,
बीच धार में सुलभ किनारा,

मंजिल है दे रही चुनौती, हँसकर उसे प्रणाम करो,
गत की मृदु–सुधियों से निकलो, आगत का निर्माण करो।

...

खण्ड 2

पथाकर्षण

सुमन पूरित पथ न मुझको चाहिए

सुमन पूरित पथ न मुझको चाहिए,
शूल हों जिस राह पर, उसकी करूँ मैं कामना।

मंदराचल से मथा जब सिन्धु को,
बॉटने अमृत तो आए अनेक थे,
याद करते हैं सभी पर नाम एक,
विष ग्रहण करने को शम्भू एक थे,

सुख–सुधा का पान कर लेते हैं सब,
मैं दुःखों का विष सभी का चाहता हूँ बॉटना।
सुमन पूरित पथ न मुझको चाहिए,
शूल हों जिस राह पर, उसकी करूँ मैं कामना।

अर्चना करते सभी हैं सूर्य की,
है मगर मुश्किल तिमिर को पूजना,
सुख–सरोवर में नहा लेते हैं सब,
दुःख के सागर में कठिन है कूदना,

न लुभा पाएगी शीतलता मुझे,
सूर्य के सम चाहता जलकर तिमिर को काटना।
सुमन पूरित पथ न मुझको चाहिए,
शूल हों जिस राह पर, उसकी करूँ मैं कामना।

चाहता हूँ मेरे जीवन में सदा,
गूँजता नव उलझनों का राग हो,
दर्द–तम–आतप–कसक–अभाव का,
मेरी कुटिया में सदा ही राज है,

सिद्धियों की भीख का इच्छुक नहीं,
मैं फलों की चाह में करता रहूँगा साधना।
सुमन पूरित पथ न मुझको चाहिए,
शूल हों जिस राह पर, उसकी करूँ मैं कामना।

■ ■ ■

उठो कल्पना की गोदी मे सोने वालों

उठो कल्पना की गोदी में सोने वालों,
स्वप्नों में खोने से कुछ भी नही मिलेगा।

सिन्धु किनारे रेती में क्या खोज रहे हो?!
रत्न अपरिमित सिन्धु–गर्भ में छुपे हुए हैं,
जो स्वप्नों में खोज रहे हो मतवाले बन,
लक्ष्य तुम्हारे आस–पास ही लुके हुए हैं,

नही दिखेंगे रत्न–लक्ष्य पर तुम्हें एक भी,
जब तक यह स्वप्नों का जाला नही हटेगा।
उठो कल्पना की गोदी में सोने वालों,
स्वप्नों में खोने से कुछ भी नही मिलेगा।

छेड़ रहे हो स्वर–लहरी जो लहक–लहक कर,
इसी तरह जब ऑख खुलेगी गा पाओगे?
क्षणिक सुखों की निधि से सत्य नही तोलो तुम,
जब टूटेंगे स्वप्न , कहो क्या जी पाओगे?

बहुत खो दिया समय डूब कर मृगजल में, अब–
व्यर्थ न बहको, मरुथल में तृण नही उगेगा।
उठो कल्पना की गोदी में सोने वालों,
स्वप्नों में खोने से कुछ भी नही मिलेगा।

तुम खोए रह गए स्वप्न में तुम्हे पता क्या,
समय कहॉ था और कहॉ अब आ पहुँचा है,
जिसका यश गाता था विश्व, कीर्ति–खम्भ वह,
आज हकीकत में देखो कितना ऊँचा है,

उठो दिवाकर बन कर विचरो नीलगगन पर,
वरना यह अँधियारा घर का नहीं मिटेगा।
उठो कल्पना की गोदी में सोने वालों,
स्वप्नों में खोने से कुछ भी नहीं मिलेगा।

...

कटु राह पर चल कर दिखा

राह तो आसान चल लेते हैं सब,
रे मनुज! कटु राह पर चल कर दिखा।।

राह जिसकी मंजिलें हों देख मत,
मंजिलें जिसकी नही उस पर चलो,
चोट खाकर तो सिसकते हैं सभी,
ठीकरों की चोट पर गाते चलो,

दर्द की अभिव्यक्ति तो करते हैं सब,
पर हृदय में तू छिपा कर के दिखा।
रे मनुज! कटु राह पर चल कर दिखा।।

तू जरा उस हाल में जीकर दिखा,
ज़िन्दगी जीने से जब इन्कार कर दे,
तू दिखा हँसकर तभी, खाकर कसम
होंठ न हँसने का जब इज़हार कर दें,

यूँ सुखों में मुस्करा लेते हैं सब,
तू दुःखों में मुस्कराकर के दिखा।
रे मनुज! कटु राह पर चल कर दिखा।।

जो भिगो दृग–कोर दे, उस दर्द को,
तू लगा अपने हृदय में प्यार से,
फूल को हँसकर लगाया है गले,
शूल को रोकर झटक मत हाथ से,

सूर्य को तो पूजते हैं सब यहाँ,
तू तिमिर की अर्चना करके दिखा।
रे मनुज! कटु राह पर चल कर दिखा।।

तृप्त के इच्छुक बढ़ाकर हाथ ले,
मिल रही हर प्यास की सौगात को,
पी गई जो रात तेरी हर सुबह,
कोस मत तू इसकदर उस रात को,

अन्याय का प्रतिकार तो करते हैं सब,
तू जरा सबको क्षमा करके दिखा।
रे मनुज! कटु राह पर चल कर दिखा।।

...

धरती पर अब कदम धरो

नीलगगन पर तिरने वालों, धरती पर अब कदम धरो।

आग उगलती लपटों को,
अपनाकर निज घर बाल रहे हो,
स्वप्नों के विषधर को क्यों तुम,
दूध पिलाकर पाल रहे हो?!

इससे पहले यह विष उगले, इसका कुछ उपचार करो,
नीलगगन पर तिरने वालों, धरती पर अब कदम धरो।

कागज की नौका के बल पर,
जीवन–सागर पार उतरना,
बहुत कठिन है मेरे साथी,
जीवन को ऐसे क्या छलना,

निशा हुई गत जागो अब, कुछ तो निज बुद्धि–सुधार करो,
नीलगगन पर तिरने वालों, धरती पर अब कदम धरो।

बिना लक्ष्य के चलने वाले,
निज राहों को भी खोते हैं,
बिना स्वेद का दान दिए,
इच्छा–फल प्राप्त नही होते हैं,

छूट गए तुम सबसे पीछे, फिर जीवन गतिमान करो,
नीलगगन पर तिरने वालों, धरती पर अब कदम धरो।

...

हो रहा प्रभात है

कहीं किसी कोने में दुबक गई रात है,
हो रहा प्रभात है।

दूर क्षितिज पर उठी है लालिमा झलक,
मढ़ गया है व्योम पर स्वर्णिम वरक,
भानु–अंशु छू उठी है मौलश्री महक,

केशर–मकरन्द पगी अतिशीतल वात है,
हो रहा प्रभात है।

लेकर के आई फिर आज उषा संग,
भर–भर के झोली में लाल–लाल रंग,
स्वागत में गीत मधुर गा रहे विहंग,

किरनों की पिचकारी सूरज के हाथ है,
हो रहा प्रभात है।

पनघट की ओर चली चंचल नागरियाँ,
शोर कर जगाने लगीं डूबती गागरियाँ,
चकिया के गीत जगे, रंभाईं गइयाँ,

नव–स्फूर्ति पगा गोरी का गात है,
हो रहा प्रभात है।

...

पंथी प्रयाण में देर न कर

पंथी प्रयाण में देर न कर,
अब सम्मुख खड़ा सवेरा है।

नभ से तम का हर जाल कटा,
हँस रहा मुक्त आकाश विमल,
छुप गए उषा के आँचल में,
कुल एक–एक कर तारक–दल,

प्राची–पट पर जागरण–चित्र,
देखो रच रहा चितेरा है,
पंथी प्रयाण में देर न कर,
अब सम्मुख खड़ा सवेरा है।

कलियाँ ले जागी अंगड़ाई,
निज कोष कमल ने खोल दिया,
शबनम में कर स्नान सद्य,
लतिका ने पहना चोल नया,

ले स्वप्न–सिन्धु–तट पर आया
किरणों का जाल मछेरा है,
पंथी प्रयाण में देर न कर,
अब सम्मुख खड़ा सवेरा है।

गाए तरु पर स्फूर्ति पगे,
जीवन के गीत विहंगों ने,
अलि ने उद्यान किए गुंजित,
करवट ली शब्द तरंगों ने,

अब छोड़ अलस का आँचल तू,
जीवन ने फिर से टेरा है,
पंथी प्रयाण में देर न कर,
अब सम्मुख खड़ा सवेरा है।

...

मुसाफिर! जाग हो गई भोर

मुसाफिर! जाग, हो गई भोर।

ले गई चुन कर रजनीबाला,
अपने दीप–सितारे,
सूरज की किश्ती आ ठहरी,
देखो क्षितिज किनारे,

सतरंगा आकाश देखकर अलि–कलि हुए विभोर,
मुसाफिर! जाग, हो गई भोर।

किरन–करों से बॉध उषा ने दी
रजनी की अलकें,
विहंग प्रयाण–गीत गाते हैं,
खुली कुमुद की पलकें,

चन्दन–वन से फिर कर आया, पागल अनिल–किशोर,
मुसाफिर! जाग, हो गई भोर।

हरित पटों पर सूख रही है,
शबनम की प्रिय चादर,
उपवन की कलियॉं भर लाई,
रस पनघट से गागर,

चले भ्रमर बंजारे गाते, फिर मधुवन की ओर,
मुसाफिर! जाग हो गई भोर।

करके निश्चय जो मैंने उठाए कदम

करके निश्चय जो मैंने उठाए कदम,
मंजिलें ख़ुद–ब–ख़ुद ही बुलाने लगीं।

होंठ सीकर पड़ा, जब तलक मैं रहा,
सारा संसार था वन विजन बन गया,
फूटा स्वर कंठ से, पीछे–पीछे मेरे,
ज़िन्दगी से भरा कारवॉं चल दिया,

सज गईं महफिलें, शै जमाने की हर,
अपना स्वर मेरे स्वर से मिलाने लगीं,
करके निश्चय जो मैंने उठाए कदम,
मंजिलें ख़ुद–ब–ख़ुद ही बुलाने लगीं।

पंथ पर ठोकरें जब लगीं, मैं अगर–
पग पकड़ कर वहीं आह भर थम गया,
जाने किस झाड़ में जा छुपा पंथ फिर,
नेत्र के द्वार पर आ धुँआ जम गया,

पर चरण नव सिरे से उठाए अगर,
मुश्किलें राह की सर झुकाने लगीं,
करके निश्चय जो मैंने उठाए कदम,
मंजिलें ख़ुद–ब–ख़ुद ही बुलाने लगीं।

दूर से चुनके तिनके थी लाई बया,
नीड़ रचने को मारुत उड़ा ले गया,
रो दिया भाग्य पर मैं बया के, अहो!
सारा श्रम किस तरह से विफल हो गया,

फिर से देखा बया को जुटाते जो तृण,
आँखें रोती हुईं मुस्कराने लगीं,
करके निश्चय जो मैंने उठाए कदम,
मंजिलें खुद–ब–खुद ही बुलाने लगीं।

***

हँसकर निभाओ

मंजिलों तक जब है जाना, मुश्किलों का व्यर्थ ताना,
शूल हों या फूल पथ पर, ओ पथिक! हँसकर निभाओ।

पंथ की ठोकर से हँस–हँस
प्राप्त करता नव त्वरण चल,
चूमने बाधा बढ़ें जब,
तू विहँस करता वरण चल,

लाख फैला हो अँधेरा,
मन नहीं चंचल हो तेरा,
इस तिमिर के पार ही,
स्वागत करेगा नव किरण–दल,

धैर्य का लेकर कुठारा, तोड़ पथ का जाल सारा,
दूरियों से डरके न अपने कदम पीछे हटाओ।
शूल हों या फूल पथ पर, ओ पथिक! हँसकर निभाओ।

आँधियों के शोर में
रहता है मंजिल का बुलावा,
जो पथिक कमजोर होते हैं
उन्हें होता भुलावा,

जो भ्रमित होते नहीं हैं,
धैर्य जो खोते नहीं हैं,
वो ही पंथी एकदिन
मंजिल पे कर पाते हैं दावा,

बिजलियों में खो गया स्वर, क्या इसी से जाओगे डर?
साँस की लय पर सतत्, तुम गीत अपना गुनगुनाओ।
शूल हों या फूल पथ पर, ओ पथिक! हँसकर निभाओ।

मंजिलें आती नहीं चलकर
तुम्हें चलना पड़ेगा,
पंथ की कठिनाइयों से,
बढ़के ख़ुद लड़ना पड़ेगा,

वह सुमन जो सह न पाता,
वायु के घातक थपेड़े,
शाख पर कब तक रुकेगा?
एक दिन झड़ना पड़ेगा,

ज़िन्दगी का ये सफर है, अंत से तू बेखबर है,
इसलिए कहता हूँ तुमसे, काल में ख़ुद को सजाओ।
शूल हों या फूल पथ पर, ओ पथिक! हँसकर निभाओ।

...

मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है

मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है।

जीवन उपवन में सावन या पतझार रहा,
करने को स्वागत सदा सहज तैयार रहा,
तपते सूरज, घिरते घन, जमते पाले से,
सबसे ही एक समान प्रीत–व्यवहार रहा,

आदतन नहीं इनकार किसी से किया कभी,
जो इन हाथों में आया, उसे सहेजा है,
मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है।

मुश्किलें न जिनमें हँसा कोई, मैं मुस्काया,
अवरुद्ध हो गए कंठ जहाँ, मैंने गाया,
तूफाँ में सागर में जब माँझी घबराए,
आशा की नाव लिए मैं डूबा–उतराया,

जिसके आगे हर दीप बुझा, उस आँधी को,
मन–दीपक ने हर रोज संदेशा भेजा है,
मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है।

वह दर्द जमाने ने जिसको ठुकराया है,
उसको अपनाना अपना धर्म बनाया है,
जिन राहों को पथिकों ने पूछा नहीं कभी,
मैंने हँस–हँस कर उन पर कदम बढ़ाया है,

अंधी राहों की भूलभुलैयाँ में मैंने,
मंजिल की दीप–शिखा को अविरल खोजा है,
मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है।

निर्झर समान मैं चीर पर्वतों को निकला
मेरे प्रवाह को रोक नहीं पाया कोई,
मुझको समाज के रीतचार न बॉध सके,
मैं इंसानों में भेद न कर पाया कोई,

जिस भक्ति–भाव से मैंने मन्दिर को पूजा,
गिरजाघर पूजा, मैंने रखा रोजा है,
मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है।

मुझसे पूरब–पश्चिम में भेद न हो पाया,
जो अपना समझे, उससे अपना नाता है,
बिक सका न मेरा गीत कभी धनवानों में,
मेरा सुर हर दुःखियारे को बहलाता है,

मुझको सावन का अॅधा सब कह लें हॅसकर,
मेरी ऑखों में कोई रंग न दूजा है,
मैंने जीवन में संघर्षों को पूजा है।

▪▪▪

तू दुःख को भी अपनाता चल

जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

कल तक जिस मधु के प्याले को,
पागल बन होंठों से चूमा,
क्यों देख उसी में आज गरल,
घबरा कर है चेहरा घूमा?

फूलों के हारों को अपनी,
ग्रीवा में हँस कर डाला था,
काँटों में दामन उलझा तो,
क्यों घूम रहा सहमा–सहमा,

जिन होठों पर पाया तूने, अपने प्रियतम का मृदु–चुंबन,
तू आज उन्हीं दो होठों पर, अंगार धरे मुस्काता चल,
जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

यह माना तेरी रातों में,
है आज चाँद का साथ नही,
लेकिन क्या अंबर पर बोलो
तारों की सजी बरात नही?

हर बाजी किसने जीती है?
हर बाजी हारा नही कोई,
क्यों खेल अधूरा छोड़ रहा?
शह का मतलब है मात नही,

अवसाद न कर कट गया अगर, एक मोहरा तेरी बाजी का,
रख धैर्य, परख और सोच–समझ, आगे का खेल बनाता चल,
जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

इस जीवन के मग पर साथी,
है धूप कही तो छॉव कही,
सुमनों को पग छू रहे कहीं,
कॉटों पर पड़ते पॉव कही,

पड़ सकता है सर को रखना,
निज बॉहों पर तरु छाया में,
हर सॉझ ढले हर राही को,
मिल जाता अपना गॉव नही,

माना सुख वाली काया है, पर आज समय यदि आन पड़ा,
तारों वाली छत के नीचे, धरती पर रात बिताता चल,
जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

गिर पड़े गाज, मिट जाए नीड़,
'पी' रुके न प्राण–पपीहे की,
गंभीर सिन्धु को पा सम्मुख,
सरिता सकुचाती कब देखी?

जो मिला तुझे इस दुनिया में,
उसको प्रभु का वरदान समझ,
तट लगे, कभी मझधार फॅसे,
किस्मत है यही सफीने की,

साहिल जीवन का ध्येय नहीं, लहरों में बहना ही होगा,
मझधारों से होकर मॉझी, तू अपनी नाव बढ़ाता चल,
जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

मन अजित रहे, तन व्यथित भले
हो जाए नियति प्रहारों से,
पग बिछल न जाए राहों से,
जब सम्मुख आपद खड़ी मिले,

तट छोड़ चलो धारों को, जब–
तूफॉं में सरिता चढ़ी मिले,
दृग में सावन का हो मौसम,
लेकिन लब पर फुलझड़ी खिले,

माना मंजिल है दूर मगर, यह भी तो मंजिल नहीं तेरी,
बेवजह रुका बैठा है क्यूँ, उठ नए तराने गाता चल,
जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

जीवन में सुख ही बना रहे,
इस इच्छा का औचित्य नहीं,
साधना बिना इस दुनिया में,
मानव पाता देवत्व नहीं,

हो गया उजाड़ चमन तो क्या,
मौसम से मत मनुहार करो,
पतझड़ भी एक दिन जाएगा,
लेकर आया अमरत्व नहीं,

जब तक जीवन–गति बनी रहे, जिस हाल रहो खुशहाल रहो,
घनघोर अमा की रातों में, हँस–हँस कर दीप जलाता चल,
जैसे अपनाया था सुख को, तू दुःख को भी अपनाता चल।

...

खण्ड 3

विकर्षण

युग–युग से जल रही वर्तिका

युग–युग से जल रही वर्तिका, लेकिन गया नही अँधियारा।

डहक रही हैं देख अभी तक,
वही अमा की रातें काली,
और सघन पहले से जादा,
तिमिर घिरा, कैसी दीवाली?

रीझे हम तारावलियों पर, देखा न घर का अँधियारा,
युग–युग से जल रही वर्तिका, लेकिन गया नही अँधियारा।

व्ययधानों के शूल राह पर,
तृष्णा का नर्तन युगव्यापी,
पग–पग विषधर की फुँकारें,
मची हुई है आपाधापी,

ज्ञान–सूर्य को निगल रहा है, प्रति दिन रातो का अँधियारा,
युग–युग से जल रही वर्तिका, लेकिन गया नही अँधियारा।

अवसादों की घोर निशा में,
आओ आशा–दीप जलाएँ,
संघर्षो की काली हाला को
हँस–हँस कर पीते जाएँ,

तमावृत जीवन है सबका, छिन्न करे मिल कर अँधियारा,
युग–युग से जल रही वर्तिका, लेकिन गया नही अँधियारा।

...

हर घर में कहाँ दीवाली है?

हर घर में कहाँ दीवाली है?

कुटिया का है दिन तक काला,
महलों में सदा उजाला है,
जलते हैं दीपक उधर, इधर–
हर उर में जलती ज्वाला है,

कही अँधेरा और घिर उठा,
कही सुबह की लाली है,
हर घर में कहाँ दीवाली है?

खील–बताशे और खिलौने,
एक आँगन में नही समाए,
और किसी का भाग्य,
न मुट्ठी–भर दाने खाने को पाए,

जिनका बहता स्वेद उन्ही की
दिखती मुट्ठी खाली है,
हर घर में कहाँ दीवाली है?

एक चौखट में है कोलाहल,
एक पर मरघट की खामोशी,
एक दिल में नई उमंगें हैं,
एक दिल में केवल मायूसी,

कही हो रहा रोदन भारी,
कही भरी खुशहाली है,
हर घर में कहाँ दीवाली है?

...

सुबह अभी है दूर

खिड़की के पार
जहाँ तक नज़र जाती है,
देखता हूँ–
    तैरती स्याह तस्वीरें,
    सहमा धुँधलका,
    काँपता सन्नाटा।
पाँव पर फेंकी चादर,
सर चढ़कर,
मानने को करती है मजबूर,
        सुबह अभी है दूर।

...

मानव का चरण

मानव का चरण
पहुँच गया चाँद पर,
निष्ठा, विश्वास और
आस्था को कुचल।

निःसन्देह,
मानव और विज्ञान की
एक बड़ी सफलता;
परन्तु,
क्या रख पाएगा मानव
इसे राजनीति के
गाढ़े धुएँ से दूर?

भय है–
कर न ले मानव
कहीं इसकी भी
शान्ति का हरण।

...

भूले आज पथिक पथ अपना

भूले आज पथिक पथ अपना।

दिशि–दिशि सुलग रही है घातक,
शोषण, लूट, दमन की ज्वाला,
मान बढ़ रहा अनाचार का,
हर चेहरा–मोहरा है काला,

मधुर कल्पना रामराज्य की, बन कर है रह गई कल्पना,
भूले आज पथिक पथ अपना।

अन्यायी वंशज रावण के,
सौ–सौ लंका गढ़ कर बैठे,
माली बगिया के हैं मद्यप,
भक्षक युगरक्षक बन बैठे,

अशिव तत्व जनशोषण करते, उनकी ही हो रही वन्दना,
भूले आज पथिक पथ अपना।

वातावरण हुआ है दूषित,
सबकी मति है बौराई सी,
चन्दन से विषधर लिपटे हैं,
कली–कली है घबराई सी,

अम्बर शंकित, व्यथित धरा है, कॉप रहा जीवन का सुगना,
भूले आज पथिक पथ अपना।

...

रात्रि भर यह कौन रोया?

रात्रि भर यह कौन रोया?
किसने निज–दृग–जल बहाकर,
भोर का ऑंचल भिगोया?

झील के जल पर चमकती,
चॉंदनी की देख क्रीणा,
कह कुमुद! था कौन? जागी–
किस हृदय में गहन पीड़ा?

तूने किसकी वेदना को,
पॉंखुरी पर है संजोया?
रात्रि भर यह कौन रोया?

किस नयन का बॉंध टूटा,
किसने ये जल–कण बिखेरा?
किस दुःखी ने था लिया,
कल रात उपवन में बसेरा?

किसने किसकी याद में,
इस अश्रुमाला को पिरोया?
रात्रि भर यह कौन रोया?

...

कैसा मुक्ति दिवस?!

कैसा मुक्ति दिवस?!

अनदेखे बंधन,
उलझा जिनमें मन,

सूना जीवन–घट, जैसे रिक्त कलश।
कैसा मुक्ति दिवस?!

असन्तोष की आग,
प्रतिक्षण उठती जाग,

नयनों में सावन, है अभिव्यक्ति विवश।
कैसा मुक्ति दिवस?!

प्रतिभा सिमट गई,
इच्छा उचट गई,

रोम–रोम भीतर, है अभिसिक्त अलस।
कैसा मुक्ति दिवस?!

...

मन कैसे गाए गीत?

मन कैसे गाए गीत हृदय के तारों पर?

उपवन के अन्दर दृष्टि जहाँ तक गई मेरी,
मैं देख रहा हर फूल पड़ा मुरझाया–सा,
कर रही नृत्य विष भरी हवाएँ सरे–आम,
माली मद्यप कोने में खड़ा पराया–सा,

अलि मौन लुटाते अश्रु जहाँ पतझारों पर,
मन कैसे गाए गीत हृदय के तारों पर?

नैराश्य घनों में खोया निष्ठा–चाँद कहीं,
तम अट्टहास के तीखे ताने मार रहा,
है पड़ा साधना के दीपक में स्वार्थ–स्नेह,
इसलिए ज्योति पर धुँआ खड़ा फुफकार रहा,

तारक–दल रूठे कुटिल कपट व्यवहारों पर,
मन कैसे गाए गीत हृदय के तारों पर?

ईमान–धर्म–सत् का कालाबाजारों में,
क्रय–विक्रय होता है मनचाहे भावों पर,
संसृति–सरिता में क्षुब्ध लहर पर तैर रही,
कर्तव्य, मनुजता कागज की लघु नावों पर,

हैं नृत्य कर रहे भँवर अचीन्हे धारों पर,
मन कैसे गाए गीत हृदय के तारों पर?

...

मनुजता सो गई

फूल ही बनके जब शूल चुभने लगे,
मुँह छुपाकर कही मनुजता सो गई।

पाप–पाखंड और दंभ की ज्योति से,
जगमगाने लगी यह धरा, यह गगन,
अर्धमूर्छित पड़ी आह भरती रही,
ज्योति सत्–दीप की, सब रहे पर मगन,

हीरे धरती पे बिखरे पड़े रह गए,
दुनिया रंगीन कॉचों पे मरती गई,
फूल ही बनके जब शूल चुभने लगे,
मुँह छुपाकर कही मनुजता सो गई।

कर्म की राह पर शूल चुनकर के जब,
कोई सुमनों की चादर बिछाने चला,
द्वेष–भावों की ऑंधी उड़ा ले गई,
रह गया सोचता वह, उसे क्या मिला?

साधना–दीप की ज्योति बुझने लगी,
ऑंधी ऐसा गरल–बीज बोकर गई,
फूल ही बनके जब शूल चुभने लगे,
मुँह छुपाकर कही मनुजता सो गई।

श्रम के झरते रहे स्वेद–बिन्दु मगर,
बिन्दु पानी समझकर खरीदी गई,
होठ हँसते रहे, दिल मगर बह चले,
रूप के हाट में जब कली बिक गई,

ओढ़कर श्वेत परिधान अलि तो गए,
दुनिया कलियों को ही दोष देती गई,
फूल ही बनके जब शूल चुभने लगे,
मुँह छुपाकर कही मनुजता सो गई।

स्वार्थ का भाव चढ़ता चला जा रहा,
न्याय का रंग भी आज बदरंग है,
हर तरफ झूम पाहन बरसते हैं अब,
गद्दियों के लिए चल रही जंग है,

घाव नासूर बनते चले जा रहे,
हर दवा, हर दुआ बेअसर हो गई,
फूल ही बनके जब शूल चुभने लगे,
मुँह छुपाकर कही मनुजता सो गई।

है महासिन्धु तृष्णा का फैला हुआ,
जिसमें हर प्राण–शिशु डूबता जा रहा,
आह का है तुमुल नाद चारों तरफ,
धैर्य का शील लुटता चला जा रहा,

चाह मधु की करी, विष मगर पी रहे,
देखकर हाल यह आँख भर–भर गई,
फूल ही बनके जब शूल चुभने लगे,
मुँह छुपाकर कही मनुजता सो गई।

▪▪▪

व्यक्ति

व्यक्ति?
एक एटम–

मन?
एक प्रोटान–

चरों तरफ घूम रही हैं,
निर्बाध गति से
इलेक्टान की तरह
समस्याएं।

...

राजनीति

राजनीति?
बादल शून्य
एक खाली आकाश–
जिसमें हर नई सुबह,
सूर्य की तरह चेहरे
उदित होकर
होते हैं अस्त;
सुबह की गुनगुनी धूप वाले,
दोपहर की चिलचिलाती धूप वाले,
दिन भर दौड़ाते,
छलावा देते,
रात के आते ही,
सपने देखने के लिए
छोड़ जाने वाले;
यह आसमान
हम
सर पर उठाते हैं,
और
सूरज को फिर सुबह
जल चढ़ाते हैं।

...

जीवन

जीवन!
कभी अनदेखे–
अचीन्हे रूप में,
तो कभी
बगलगीर दोस्त की तरह,
जाना–पहचाना।
कभी झील में चमकते
चांद की परछांई–सा
जिसे ओक में भर कर,
घर नहीं ले जा सकते,

वही कभी
स्वयं उतर आता है
आसमान से
कागज पर शब्दों के रूप में
अपना–अपना सा
लगता है वह चांद
किसलिए?

...

मुस्कराने के लिए

मुस्कराने की चाह
जब ऑखों से उतरकर
दामन को पकड़ लेती है,
रोटी से जादा
नींद भाती है,
क्योंकि
उसके पास हैं सपने,
जिन्हें देखने के
पैसे नहीं लगते।

...

खण्ड 4

राग–अनुराग

प्रिय! तेरा यह प्रणय–दीप

प्रिय! तेरा यह प्रणय–दीप, इसमें यथार्थ का तेल नहीं।

इस प्रणय–पंथ–विजगीषा में,
लुटती आई तरुणाई है,
इस मृगमरीचिका ने बोलो,
कितनों की तृषा बुझाई है,

अंबर पर चाँद चमकता जब,
तब मन में आग भड़कती है,
काली रातों की तनहाई,
आँखों में आँसू लाई है,

धुल जाएगा दृग का काजल, बावरी खेल यह खेल नहीं,
प्रिय! तेरा यह प्रणय–दीप, इसमें यथार्थ का तेल नहीं।

अधरों पर हँसी नही रहती,
मन का तमाम सुख–चैन लुटे,
है खेल कठिन, इसमें अक्सर,
अरमानों की हर गोट पिटे,

अवमान–उपेक्षा की आँधी के–
सम्मुख एक–एक करके,
तिनका–तिनका उड़ जाता है,
सपनों का प्यारा नीड़ मिटे,

न डूब भावना के जल में, इससे जीवन का मेल नहीं,
प्रिय! तेरा यह प्रणय–दीप, इसमें यथार्थ का तेल नहीं।

फूलों से कोमल गात तेरा,
यह पंथ कंटकों से पूरित,
पीड़ा की अग्नि–शिखा में जल,
जीवन जीते–जी होता मृत,

स्वप्नों की पूँजी के दम पर,
साहूकारी का गर्व न कर,
कंचन का प्रेम–पात्र है यह,
है जिसके अन्दर गरल अमित,

मन के आलम्बन के बल पर, चढ़ती स्वप्नो की बेल नहीं,
प्रिय! तेरा यह प्रणय–दीप, इसमें यथार्थ का तेल नहीं।

...

साथ नही तुम दे पाओगी

साथ नही तुम दे पाओगी।

स्वप्नों में यूँ व्यर्थ न बहको,
जीवन का तुमे वेणु न समझो,
दुःख ज्यादा हैं प्रणय–पंथ में,
मेरी मानो व्यर्थ न परखो,

फिर भविष्य में पछताओगी,
साथ नही तुम दे पाओगी।

सूना होता मन का ऑगन,
नयनों में पलता है सावन,
सुमनों पर चलने वाली तुम,
इस पथ पर बिखरे हैं पाहन,

दो पग विहंस न चल पाओगी,
साथ नही तुम दे पाओगी।

मुझे भले पाषाण समझ लो,
मेरा मन निस्प्राण समझ लो,
लेकिन मेरा कहा मान लो,
इसमें सबका त्राण समझ लो,

कल तुम दोष मुझीको दोगी,
साथ नही तुम दे पाओगी।

...

गया यह वैरागी मन डोल

चितवन से ऐसे छुआ, गया यह वैरागी मन डोल।

पूनम की धवल चॉदनी सी,
स्वप्नों की सुघड़ तारिका सी,
यौवन की मदिरा साथ लिए,
मधुशाला की मधुबाला सी,

कर रहीं नृत्य मन–ऑगन में, पग–पग करतीं भूडोल,
चितवन से ऐसे छुआ, गया यह वैरागी मन डोल।

उरझीले केशों में रातें,
उन्मुक्त हास में प्रात बंद,
चन्दन–तन पुष्प–ध्वजा जैसा,
वाणी से झरते राग–छन्द,

भ्रमरों को भ्रम में डाल रही, कंचन काया अनमोल,
चितवन से ऐसे छुआ, गया यह वैरागी मन डोल।

अंजन से ऑजे नयनों में,
उपहास भरा है संयम का,
अंगार सरीखा दमक रहा,
माथे पर टीका कुमकुम का,

मन पर गुलाल सा फेंक रहे, मुस्काते अरुण कपोल,
चितवन से ऐसे छुआ, गया यह वैरागी मन डोल।

...

मन आज नियंत्रण खो देगा

मत देखो मादक चितवन से, मन आज नियंत्रण खो देगा।

कुछ तो मौसम का भीगापन,
मेरे मन को हिसकार गया,
उस पर तुम निकलीं आज शुभे!
उपवन में कर श्रृंगार नया,

कैसे मन पर अधिकार धरूँ?
किस तरह तुझे मैं प्यार करूँ?
तेरा कंचन सा रूप मेरे तन–मन में आग लगा देगा,
मत देखो मादक चितवन से, मन आज नियंत्रण खो देगा।

कुछ मुझे निमंत्रण देते हैं,
ये मेंहदी वाले हाथ तेरे,
ये फूल तुम्हारी वेणी के,
भड़काते हैं जज़्बात मेरे,

किस तरह तुम्हारी छवि देखूँ?
नयनों में डूब स्नेह आँकूँ?
है आज मुझे भय यह काजल मेरा मन मैला कर देगा,
मत देखो मादक चितवन से, मन आज नियंत्रण खो देगा।

ईमॉ पर सेंध लगाती है,
यह तेरे होंठों की लाली,
अंगार हृदय पर रखती है,
तेरी बिंदिया तारों वाली,

तेरी बॉहों का आलिंगन,
कंपित अधरों का मृदु–चुंबन,
जीवन भर जो खटके उर में एक ऐसी गिरह लगा देगा,
मत देखो मादक चितवन से, मन आज नियंत्रण खो देगा।

इतना न आओ पास आज,
मन मेरा चंचल हो जाए,
एकान्त बढ़ावा देता है,
न प्रणय पाप में ढल जाए,

आओ अपने मन को साधें,
दूरी की कुछ सीमा बॉधें,
सामीप्य तुम्हारा ऐसे में मेरा व्यवहार भुला देगा,
मत देखो मादक चितवन से, मन आज नियंत्रण खो देगा।

...

सुमुखि! काट है लिया परों को तुमने

सुमुखि! काट है लिया परों को तुमने,
कैसे मैं अब और कहीं उड़ जाऊँ?

मैं तो था उन्मुक्त गगनपथ गामी,
मारुत की लहरों पर मेरा घर था,
तुमने बिखरा कर आँसू के मोती,
स्नेह–पाश में मुझको लिया जकड़ था,

नभ से कट कर आन जुड़ा हूँ तुमसे,
वापस फिर नभ से कैसे जुड़ जाऊँ?
सुमुखि! काट है लिया परों को तुमने,
कैसे मैं अब और कहीं उड़ जाऊँ?

मैं तरु की छाया में सोने वाला,
स्वप्न महल में तुमने ला ठहराया,
मुझे याद है – मेरे शंकित मन को,
क्या–क्या कह कर था तुमने बहलाया,

निज–पथ से हूँ दूर चला आया अब,
तुम कहती हो पर कैसे मुड़ जाऊँ?
सुमुखि! काट है लिया परों को तुमने,
कैसे मैं अब और कहीं उड़ जाऊँ?

प्राण न जब थे प्रिय, तब तुमने रोका,
साथ–साथ चलने का वादा करके,
मोह जगाया जीवन के प्रति मुझमें,
अब ले रही परीक्षा कायर करके,

बैठ किनारे चाह रही हो मुझसे,
मैं तूफाँ में लहरों से भिड़ जाऊँ।
सुमुखि! काट है लिया परों को तुमने,
कैसे मैं अब और कहीं उड़ जाऊँ?

...

रात के आँचल में तुम तो सो गईं बेसुध

रात के आँचल में तुम तो सो गईं बेसुध,
एक दीपक जैसा जलता मैं रहा लेकिन।

बेखबर निस्पन्द तुम क्या मेरी गति जानो,
घूम आया मैं कहाँ तक याद के रथ पर,
प्राण–पाखी ने क्षितिज के छोर तक नापे,
आँसुओं के मोती बिखराए निशा–पथ पर,

स्वप्न के संसार में तुम खो गईं तत्क्षण,
रात भर करवट बदलता मैं रहा लेकिन,
रात के आँचल में तुम तो सो गईं बेसुध,
एक दीपक जैसा जलता मैं रहा लेकिन।

तन रहा आकुल, हृदय व्याकुल रहा मेरा,
एक थपकी तक न दी तुमने मुझे आकर,
मैं प्रतीक्षा में तेरी निश्चल रहा बैठा,
स्वप्न में तुम नाप आए दूर तक अंबर,

तुमने अपनी मंजिलों को पा लिया शायद,
राह में साथी! भटकता मैं रहा लेकिन,
रात के आँचल में तुम तो सो गईं बेसुध,
एक दीपक जैसा जलता मैं रहा लेकिन।

इस उपेक्षा की लहर की चोट के आगे,
आश बालू के घरौंदों की तरह ढहती,
आँख पर आकर ठहरता सावनी मौसम,
नीड़ पर जैसे तड़प कर गाज है गिरती,

बंद पलकों में सजाया एक घर तुमने,
आसमॉं पर तारे गिनता मैं रहा लेकिन,
रात के ऑंचल में तुम तो सो गईं बेसुध,
एक दीपक जैसा जलता मैं रहा लेकिन।

...

चाँदनी है रात मैं चुपचाप हूँ

चाँदनी है रात मैं चुपचाप हूँ।

हैं पड़े बंधन अदेखे,
भावना के पाँव में,
लुट गई शब्दों की गठरी,
रूप के एक गाँव में,

कल्पना ने साथ छोड़ा,
सो गई अभिव्यक्ति है,
कंठ संज्ञाहीन मेरा,
सुधि न कोई पंक्ति है,

प्रीत के अपराध का अनुताप हूँ,
चाँदनी है रात मैं चुपचाप हूँ।

देख तारक से सजा अंबर
नही मन जागता,
अंजुमन में खिल रहे
फूलों से कुछ न वास्ता

शिथिल–उन्मन हूँ पड़ा,
निस्पन्द मैं अनजान–सा,
रस–अरस का बोध निकला
हृदय से मेहमान–सा,

दूर तक खोता हुआ पदचाप हूँ,
चाँदनी है रात मैं चुपचाप हूँ।

...

आए हैं प्यार मधुर लेकर

आए हैं प्यार मधुर लेकर, तेरे अपनत्व भरे आखर।

इतना तो प्यार कभी पहले,
जगती पर नही मिला मुझको,
जितना छोटे से परिचय में,
तुमने है दे डाला मुझको,

रस–रंग–रूप और गंध सने,
कागज के टुकड़े के ऊपर,
तेरे हाथों के शब्दों ने,
अंतर तक छू डाला मुझको,

मन–कुसुम खिलाते आए हैं, तेरे अनुराग भरे आखर,
आए हैं प्यार मधुर लेकर, तेरे अपनत्व भरे आखर।

कल तक खुद में ही तन्मय–सा,
चुपचाप अलग मैं रहता था,
बन कर विषाद की मूर्ति एक,
तनहाई में कुछ बुनता था,

अपने हर सपने का बोझा,
अपने ही कँधों पर लादे,
दुनिया से दूर अकेला मैं,
न जाने कहाँ भटकता था,

पथ मुझे दिखाते आए हैं, ये तेरे ज्योति भरे आखर,
आए हैं प्यार मधुर लेकर, तेरे अपनत्व भरे आखर।

दुनिया ने तोड़ दिया मुझको,
अपनों ने मुझको लूट लिया,
मेरे सपनों की चिता सजा,
उसको समाज ने फूँक दिया,

जिससे भी अपनी व्यथा कही,
उसने मेरा उपहास किया,
जिससे मैंने करुणा मॉंगी,
वह मानव मुझसे रूठ गया,

अंतस् सहलाते आए हैं, तेरे उत्साह भरे आखर,
आए हैं प्यार मधुर लेकर, तेरे अपनत्व भरे आखर।

अपनी बॉंहों में थाम मुझे,
दुलराया तुमने प्रथम बार,
मेरे दृग–कोरों के ऑंसू,
ऑंचल से पोंछे प्रथम बार,

आभारी हूँ तेरा, तूने–
मेरा मन आह–घिरा देखा,
मेरे मन की पीड़ा समझी,
जीवन में तुमने प्रथम बार,

प्रतिरूप तुम्हारा बन आए, तेरे मृदुहास भरे आखर,
आए हैं प्यार मधुर लेकर, तेरे अपनत्व भरे आखर।

...

तेरे दो नैनों में

है जीवन का मधुमास तेरे दो नैनों में।

सागर से भी जादा गहरा,
यह नैनों का सागर तेरा,
दो हंस तिर रहे लहरों पर,
जिसमें करते मनहर क्रीणा,

संयम का है उपहास तुम्हारे सैनों में,
है जीवन का मधुमास तेरे दो नैनों में।

ये अधर मदिर मधु में डूबे,
जैसे मदिरा के दो प्याले,
ऊषा की अरुणीली आभा–
रंजित कपोल हैं मतवाले,

है कितना मोहक पाश तुम्हारे बैनों में,
है जीवन का मधुमास तेरे दो नैनों में।

...

तुम्हारा मधुर सलोना रूप

तुम्हारा मधुर सलोना रूप,
चॉदनी का मादक प्रतिरूप,
जड़ा चित्रित ऑखों में।

देवपथ–सा यह भव्य ललाट,
चमकती बिंदिया रवि सी,
लिए अधरों पर प्रातः–हास,
कल्पना हो तुम कवि की,

कमल–कलिका सा तेरा गात,
कुन्तलों में है लिपटी रात,
वदन शशि सा रातों में।
तुम्हारा मधुर सलोना रूप,
चॉदनी का मादक प्रतिरूप,
जड़ा चित्रित ऑखों में।

मौलश्री सी रसभीगी मदिर,
तुम्हारी देह–गंध है,
शील से झुकी तरंगित दृष्टि,
हास्य में राग–छन्द है,

कौस्तुभ सी मणियों में तुम,
चॉद तारावलियों में तुम,
अलग तुम हो लाखों में,
तुम्हारा मधुर सलोना रूप,
चॉदनी का मादक प्रतिरूप,
जड़ा चित्रित ऑखों में।

...

आज फिर पाती मिली

आज फिर पाती मिली मुझको तुम्हारी,
खिल उठा है फिर हृदय का भाव–नन्दन।

प्रेममय ये मोतियों से शब्द तेरे,
झर रहे हों जैसे सावन में जलद–कण,
चटकती हैं छन्द की कलियाँ कही पर,
और दमकता है कही रस–रूप–दर्पण,
लग रहा है जैसे खुद साक्षात आकर,
मेरे अंतस्तल को तुम दुलरा रही हो,
भावभीनी पँक्तियाँ छूकर हृदय को,
खोलती हैं स्वप्न का संसार तत्क्षण,

एक टुकड़ा मात्र कागज का नही यह,
दग्ध तन–मन के लिए है प्रीत–चन्दन,
आज फिर पाती मिली मुझको तुम्हारी,
खिल उठा है फिर हृदय का भाव–नन्दन।

जो दिया तूने मुझे उस स्नेह से ही,
प्रेम और विश्वास का दीपक जलाकर,
एक निपट अनजान पथ पर सहजता से,
रख दिए हैं मैंने अपने पग बढ़ाकर,
देखना निष्ठुर हवा का कोई झोंका,
मेरे इस दीपक को न आकर बुझादे,
और मैं होकर विलग इसकी विभा से,
प्रेम के पथ पर न रह जाऊँ बिखरकर,

ये न हो, तुम स्वर नए गीतों को दे दो,
और मेरी साँस फिर बन जाए कन्दन,
आज फिर पाती मिली मुझको तुम्हारी,
खिल उठा है फिर हृदय का भाव–नन्दन।

...

स्वप्न में कल रात तुम आए

स्वप्न में कल रात तुम आए, मगर बन कर पहेली।

चाँद था अटका हुआ,
रेशम से कुंतल जाल में,
झूलती थी वायु बहकी,
मौलश्री की डाल में,

सारा आलम था तुम्हारे,
प्यार में डूबा हुआ,
तुम नहीं समझोगी,
मैं उस वक्त था किस हाल में,

छूटने संयम लगा था, यूँ तुम्हें पाकर अकेली,
स्वप्न में कल रात तुम आए, मगर बन कर पहेली।

लाज से आरक्त चेहरा,
अपने पाँवों पर टिकाए,
पास में बैठी थी तुम,
जब वेणी में गजरे लगाए,

व्योम जैसे भाल पर बिंदिया
सजी थी चाँद जैसी,
मन किया था भ्रमर बनकर,
नवकली पर गुनगुनाए,

साँस में मेरे महक उठी थी चम्पा और चमेली,
स्वप्न में कल रात तुम आए, मगर बन कर पहेली।

पुष्पध्वज जैसे बदन पर,
तेरे ऑंचल के सितारे,
जुगनुओं से जलते–बुझते,
कर रहे थे कुछ इशारे,

भावनाओं को जगाती थी
रजत मुस्कान तेरी,
तेरे अधरों पर थे मुखरित,
प्रेम–आमंत्रण कुँवारे,

रख दिया अंगार जलता, चूम कर मेरी हथेली,
स्वप्न में कल रात तुम आए, मगर बन कर पहेली।

...

तुम कहो तो

तुम कहो तो मैं तुम्हारा मीत बन जाऊँ ।

हाशिया–सा जग–कटा मन मौन है बुनता,
हृदय–कारा में पड़ा हर गीत सिर धुनता,

तुम भरो स्वर में मधुर संगीत बन जाऊँ,
तुम कहो तो मैं तुम्हारा मीत बन जाऊँ।

मरुथलों में मैं ठगा जाता रहा मृग–सा,
जन्म से ही देखता हूँ प्राण निज प्यासा,

तुम छुओ तो मैं तृषा की जीत बन जाऊँ,
तुम कहो तो मैं तुम्हारा मीत बन जाऊँ।

रस–पगे अधरों से मेरा नाम तो लो तुम,
वल्लरी–बाँहों में मुझको थाम तो लो तुम,

प्रिय सहज ही मैं शलभ की प्रीत बन जाऊँ,
तुम कहो तो मैं तुम्हारा मीत बन जाऊँ।

...

पाती फिर आज मिली तेरी

पाती फिर आज मिली तेरी, मानो मरते को स्वॉस मिला।

था म्लान हृदय मैं घूम रहा,
तनहा–तनहा, भूला–भूला,
कहने को चारों ओर मेरे,
था लगा हुआ मेला–ठेला,

मेरे उर के अन्तःपुर में, सुधियों के दीप जले जगमग,
कागज पर लिखी पंक्तियों में मुझको तेरा एहसास मिला,
पाती फिर आज मिली तेरी, मानो मरते को स्वॉस मिला।

मर्माहत प्रतिदिन देख रहा,
सुमनों से मिलते भ्रमरों को,
कितने निज अधर अभागे हैं,
जो दूर पड़े प्रिय अधरों से,

ऑखों से दूर तुम्हें करके, भावाकुल सोच रहा हूँ अब,
मुझको सावन की इस ऋतु में क्यों अनचाहा वनवास मिला,
पाती फिर आज मिली तेरी, मानो मरते को स्वॉस मिला।

यह कालचक्र की कुटिल चाल,
पल–पल युग जैसा भरमाते,
मैं तुम तक पहुँच नहीं पाता,
तुम मुझ तक पहुँच नहीं पाते,

कर्मों के बंधन में उलझा, यह कैसा जीवन है अपना,
जिसमें अधरों को दर्द–गीत और सॉसों को उच्छ्वास मिला,
पाती फिर आज मिली तेरी, मानो मरते को स्वॉस मिला।

शब्दों में कही नहीं जाती,
निज मन की मर्म–कहानी अब,
तुम स्वयं समझ लेना आगे,
प्रिय मेरी शेष कहानी अब,

जर्जर–कातर अंतस मेरा, कह रहा नियति का खेल देख,
प्रिय–दर्शन के प्यारे मन को बरबस निर्जल उपवास मिला,
पाती फिर आज मिली तेरी, मानो मरते को स्वॉंस मिला।

...

तुम निज कर से छुओ

तुम निज कर से छुओ तार उर की वीणा के,
एक–एक धड़कन मन की गुंजन बन जाए।

जिस क्षण से परिचय जाना है मैंने खुद का,
देख रहा हूँ मरुथल–सा जीवन–सर सूखा,
कभी न छूती जिसे सरस–घन–दृष्टि किसी की,
मैं बबूल–या जिया, तृप्ति ने जिसे न देखा,

तुम बादल बनकर यदि आ जाओ जीवन में,
पतझर–सा मेरा जीवन सावन बन जाए,
तुम निज कर से छुओ तार उर की वीणा के,
एक–एक धड़कन मन की गुंजन बन जाए।

पीड़ा का इतना उपहार मिला है सबसे,
अनचाहे ही दर्द बिखर जाता है दृग–से,
काली–अँधियारी रातों ने होकर निष्ठुर,
लूट लिया स्वप्नों को मेरे सजल नयन से,

मिल जाए दृग–परस तुम्हारा यदि प्राणों को,
मरुथल–सा जलता जीवन चन्दन बन जाए,
तुम निज कर से छुओ तार उर की वीणा के,
एक–एक धड़कन मन की गुंजन बन जाए।

पथ का पाहन समझा मुझको जगवालों ने,
गरल दिया पीने को मुझको मधु–प्यालों ने,
मुझसे खेली नियति यहाँ पर खेल अनेकों,
मुझको ठुकराया मन्दिर के घड़ियालों ने,

तुम चाहो तो जहाँ झुकाए शीश जमाना,
प्रीत चौर का ठाकुर यह पाहन बन जाए,
तुम निज कर से छुओ तार उर की वीणा के,
एक–एक धड़कन मन की गुंजन बन जाए।

दुनिया ने अवमान, अवज्ञाओं से तोड़ा,
नफरत की आँधी ने मुझको इतना छेड़ा,
मुझसे मेरी साँसें करने लगी बगावत,
मेरी परछांई ने मेरा दामन छोड़ा,

तुम यदि मेरे साथ चलो दो कदम विहंसकर
पथ का हर कंटक तेरा चुंबन बन जाए,
तुम निज कर से छुओ तार उर की वीणा के,
एक–एक धड़कन मन की गुंजन बन जाए।

कुंठाओं का बोझ शिथिल कर रहा बदन को,
मन उन्मन मेरा बैठा है ओढ़ कफन को,
जीवनपथ से रूठ गए हैं कदम ऊबकर,
चिरनिद्रा की चाह घेरने लगी नयन को,

नेह–सिक्त यदि तुम आशा की बाती कर दो,
संभव है फिर बुझा हुआ दीपक जल जाए,
तुम निज कर से छुओ तार उर की वीणा के,
एक–एक धड़कन मन की गुंजन बन जाए।

...

आशा–दीप जला दो

मेरे मन–ऑगन में आकर, आशा–दीप जला दो,
छंट जाए नैराश्य–तिमिर, तुम मंद–मंद मुस्का दो।

तेरा आलम्बन मिल जाए,
तो हर पीड़ा सह लूँ,
तेरे स्नेहॉचल में छुपकर,
मैं जग विस्मृत कर दूँ,

अनल ज्वाल अन्तर में दहके, आकर शुभे! बुझा दो,
छंट जाए नैराश्य–तिमिर, तुम मंद–मंद मुस्का दो।

मदिरालय से नयन तेरे,
है मधुमय तेरा गात,
स्नेह–सुरा से भर दो,
मेरा रीता जीवन पात्र,

तिरते अश्रु–मेघ ऑखों में, इनको आज सुला दो,
छंट जाए नैराश्य–तिमिर, तुम मंद–मंद मुस्का दो।

शेष नही जीवन में कुछ,
बस एक तुम्हारा प्यार,
तेरे रतनारे होठों में,
है सारा संसार,

मेरे मन–उपवन में हॅसकर, किसलय–सुमन खिला दो,
छंट जाए नैराश्य–तिमिर, तुम मंद–मंद मुस्का दो।

...

हैं मिले चन्द पल जीवन के

हैं मिले चन्द पल जीवन के आ प्यार करें,
कुछ पता नही कब द्वार विदाक्षण आ पहुँचे।

गाएँ मिल ऐसा गीत कि जिसको सुन करके,
स्तब्ध हृदय में जीवन की हलचल जागे,
है आज चाँदनी रात हमारे जीवन में,
क्या पता इसी स्थिति में आए फिर आगे,

इस मिली सम्पदा का उपभोग करें, न हो–
कल को भुगताने कर्ज महाजन आ पहुँचे,
हैं मिले चन्द पल जीवन के आ प्यार करें,
कुछ पता नहीं कब द्वार विदाक्षण आ पहुँचे।

इस मुखर चाँदनी का तबतक रसपान करें,
जबतक है कुछ भी शेष–सरस जीवन–घट में,
मत आज रहें हम दूर प्रेम–आलिंगन से,
कल मिलन कहाँ संभव होगा यम–आहट में,

साँसों से जीवन बंधा हुआ मालूम नही,
कब कुटिल काल तोड़ने ये बंधन आ पहुँचे,
हैं मिले चन्द पल जीवन के आ प्यार करें,
कुछ पता नहीं कब द्वार विदाक्षण आ पहुँचे।

हैं आज नियति से बरस रहे ये प्रणय–जलद,
अनुताप न हो कल, सद्य–स्नान इसमें कर लें,
इससे पहले रस–पनघट हो जाए रीता,
आओ अपनी–अपनी गागर दोनों भर लें,

अधरों पर कोलाहल वरने से क्यों चूकें,
क्या पता, कौन पल चिर सूनापन आ पहुँचे,
हैं मिले चन्द पल जीवन के आ प्यार करें,
कुछ पता नहीं कब द्वार विदाक्षण आ पहुँचे।

है आज प्रकंपन शांत, करुण है दैव आज,
आओ हम दोनों करें नीड़ की संरचना,
ऐसा बालें एक दीप कि जबतक रहे धरा,
छू सके न उसकी दीप्त–शिखा को तिमिर घना,

आओ द्रुतगति से सपनों का निर्माण करें,
रचना से पूर्व कहीं न क्षय–क्षण आ पहुँचे,
हैं मिले चन्द पल जीवन के आ प्यार करें,
कुछ पता नहीं कब द्वार विदाक्षण आ पहुँचे।

इतिहास–पटल पर प्रीत–चित्र अपना खींचें,
मन के भावों को मिली सिन्धु–गहराई है,
ये रंग चटक कब मिलें, मिले फिर कब अवसर,
अज्ञात, प्रिये! पल भर की यह तरुणाई है,

न हो ऐसा, जब कल रंगों का चयन करें,
तब चलाचली का हमें निमंत्रण आ पहुँचे,
हैं मिले चन्द पल जीवन के आ प्यार करें,
कुछ पता नहीं कब द्वार विदाक्षण आ पहुँचे।

...

चुग कर गई सुखद–क्षण–मोती

चुग कर गई सुखद–क्षण–मोती, दूर देश एक हेम हंसिनी,
सोच रहा हूँ – अब जीवन के मानसरोवर का क्या होगा?

मैं मरुथल वासी था, प्यासा रहना सहज प्रकृति थी मेरी,
मुझे भ्रमित कर ले आई थी, पनघट पर पनिहारिन गोरी,
मगर भार है बहुत मेरे जीवनघट का, पनघट है गहरा,
कह कर लौटी गॉंव, साथ में लेती गई प्रीत की डोरी,

अब पनघट पर बैठ अकेला, सोच रहा भीगे दृग लेकर,
पंचतत्व से बनी मेरी इस रीती गागर का क्या होगा?
चुग कर गई सुखद–क्षण–मोती, दूर देश एक हेम हंसिनी,
सोच रहा हूँ – अब जीवन के मानसरोवर का क्या होगा?

मेरे मन–मन्दिर में आकर, एक मनुज ईश्वर बन बैठा,
आस्था और विश्वास जगाकर, निर्गुन स्वयं सगुन बन बैठा,
मेरे प्राणों की पीड़ा हर, मुझे प्रीत वरदान दिया वह,
मेरा थका हुआ स्वर लहका और उसका कीर्तन बन बैठा,

लेकिन जैसे छोड़ राधिका को श्रीकृष्ण पधारे मथुरा,
चला गया वह, व्यर्थ और अर्चन–आडम्बर का क्या होगा?
चुग कर गई सुखद–क्षण–मोती, दूर देश एक हेम हंसिनी,
सोच रहा हूँ – अब जीवन के मानसरोवर का क्या होगा।

मौसम है रच रहा थली पर, कितने आयोजन–आकर्षण,
इन्द्रधनुष का तोरण लटका, अम्बर पर करते घन नर्तन,
कोयल मंगलगीत सुनाने लगी खिले उपवन में आकर,
अपने उर का ताप लिए मैं किसके आगे करूँ समर्पण,

व्यर्थ आज यह सारा उत्सव, कैसे मैं ऋतु को समझाऊँ,
चला गया प्रियतम ही जब, तब प्रीत स्वयंवर का क्या होगा?
चुग कर गई सुखद–क्षण–मोती, दूर देश एक हेम हंसिनी,
सोच रहा हूँ – अब जीवन के मानसरोवर का क्या होगा?

...

हो सके अगर तुमसे तो आ जाना

हो सके अगर तुमसे तो आ जाना,
मेरी ऑखों की तृषा मिटा जाना।

हर रात तिमिर जब तारों से ढलकर,
धरती के ऊपर आकर छा जाए,
दिन भर कर्मों की गति से बंधी हुई,
दुनिया को नींद मधुर जब आ जाए,

मरुथल हो, पर्वत हो, चाहे सागर,
सबकी दुर्गमता के ऊपर हँसकर,
सपनों से डैने मॉग लगा आना,
हो सके अगर तुमसे तो आ जाना।

हर रात तुम्हारी मौन प्रतीक्षा में,
मेरी ऑखों से नींद रूठती है,
विश्वास हृदय का होता है लज्जित,
हर रोज सुबह जब बाट टूटती है,

एक रोज हटाकर तुम मेरी चादर,
चुपके से मेरे सपनों में आकर,
मेरे व्याकुल मन को थपका जाना,
हो सके अगर तुमसे तो आ जाना।

मेरे मन पर कर्मों की जंजीरें,
तेरे पॉवों में भी कुछ बंधन हैं,
दृग में सहेज कर मन की पीड़ा को,
हम दूर–दूर बैठे दो सावन हैं,

लेकिन मन तो स्वच्छन्द सदा रहता,
इसलिए निमंत्रण मैं तुझको देता,
करना स्वीकार, नहीं अलसा जाना,
हो सके अगर तुमसे तो आ जाना।

▪▪▪

लाल ज्वाल से अधर तुम्हारे

लाल ज्वाल से अधर तुम्हारे, जब से चूम गए हैं मुझको,
अपने दो अधरों पर तबसे, मुझको बहुत दहन लगता है।

मेरी बगिया में बैठा था,
कल तक पतझर बना पहेली,
कभी न महकी इन साँसों में,
अब से पहले जुही–चमेली,

सूखी गई थी यूँ हर क्यारी,
कली खिली जो मरी कुँवारी,
मगर सींचने कभी न आई,
चातक की वह सरस सहेली,

तुम जबसे माली बन बैठे, हर बिरवे में फूल खिला है,
स्नेह–गंध से सराबोर मेरा जीवन उपवन लगता है,
लाल ज्वाल से अधर तुम्हारे, जब से चूम गए हैं मुझको,
अपने दो अधरों पर तबसे, मुझको बहुत दहन लगता है।

जिस घर में आवास कभी था,
उसकी दीवारें थीं खण्डहर,
सुख का साधन एक नहीं था,
साथ न था जग का आडम्बर,

कभी लाँघ कर ड्योढ़ी उसकी,
आईं न सुख भरी हवाएँ,
नीरवता थी पैर पसारे,
दरवाजे के अन्दर–बाहर,

तुमने अपने स्नेहिल मन में, प्रिय! जबसे स्थान दिया है,
तारों की छत वाला झोपड़, मुझको राजभवन लगता है,
लाल ज्वाल से अधर तुम्हारे, जब से चूम गए हैं मुझको,
अपने दो अधरों पर तबसे, मुझको बहुत दहन लगता है।

हुआ न था परिचय जब अपना,
तुम जब मेरा प्यार नहीं थे,
मेरी दुखियारी माटी पर,
सुख के कुछ श्रृंगार नहीं थे,

इस पीड़ा के सन्यासी को,
अपना कौन बनाता जग में,
मुझे ठौर देने को कल तक,
सपने तक तैयार नहीं थे,

मेरी हर पीड़ा पर तुमने, जबसे दो ऑसू ढुलकाए,
मेरे दग्ध विकल प्राणों को हर मौसम सावन लगता है,
लाल ज्वाल से अधर तुम्हारे, जब से चूम गए हैं मुझको,
अपने दो अधरों पर तबसे, मुझको बहुत दहन लगता है।

भटक रही थी दर–दर कल तक,
मेरी व्यथा, मेरी तरुणाई,
हर ड्योढ़ी ने ताना मारा,
हर खिड़की ने हॅसी उड़ाई,

और अगर इस निष्ठुरता पर,
मेरा आह भरा स्वर गूॅजा,
मेरे विद्रोही गीतों को,
निर्वासन की सजा सुनाई,

लेकिन जबसे तुमने जोड़ा, अपना जीवन साथ हमारे,
दुनियावालों का उलाहना, मुझको अभिनंदन लगता है,
लाल ज्वाल से अधर तुम्हारे, जब से चूम गए हैं मुझको,
अपने दो अधरों पर तबसे, मुझको बहुत दहन लगता है।

...

मन इतना स्वच्छंद नहीं है

तुम्हें छोड़कर अब कुछ सोचे, मन इतना स्वच्छंद नहीं है।

तन से दूर हुए तुम माना,
लेकिन दूर नहीं हो मन से,
ओझल हुए नजर से लेकिन,
बंधे हुए हो इस जीवन से,

तेरे संग बिताए मैंने, जो स्वर्णिम क्षण हैं गिनती के,
उनकी सुधियों से बढ़कर अब और कहीं आनन्द नहीं है,
तुम्हें छोड़कर अब कुछ सोचे, मन इतना स्वच्छंद नहीं है।

माना गीत हमारे तुमको,
व्यग्र और कर देते होंगे,
और रात्रि के सूने पल तब,
विरह अग्नि भड़काते होंगे,

मगर गीत जब लब पर आए, कैसे रोकूँ? तुम बतलाओ,
मुझसे तो अपने भावों पर लग पाता प्रतिबंध नहीं है,
तुम्हें छोड़कर अब कुछ सोचे, मन इतना स्वच्छंद नहीं है।

जबसे बंधे प्रेम बंधन में,
स्नेह सिक्त है जीवन सारा,
मुझे लग रहा हम दो तन हैं,
मगर एक है प्राण हमारा,

बात उठ रही एक हृदय में, पूछ रहा तुमसे सच कहना,
तेरा–मेरा क्या पिछले जीवन का कुछ सम्बंध नहीं है?
तुम्हें छोड़कर अब कुछ सोचे, मन इतना स्वच्छंद नहीं है।

साँस-साँस में गंध तुम्हारी,
रोम-रोम में प्यार तुम्हारा,
हर पल-छिन महसूस कर रहा,
अंग-अंग स्पर्श तुम्हारा,

जिस रंग रंगा हमारा जीवन, उस पर कोई रंग चढ़े अब,
समय-चितेरे की झोली में इतना गहरा रंग नहीं है,
तुम्हें छोड़कर अब कुछ सोचे, मन इतना स्वच्छंद नहीं है।

...

छोड़ कर मुझको गए सब

छोड़ कर मुझको गए सब, जो भी थे अपने–पराए,
तुम अगर अपना लो मुझको, ज़िन्दगी फिर मुस्कराए।

जो मेरे अपने थे कल तक,
आज वो रूठे हुए हैं,
एक जरा सी बात पर,
मुँह फेर कर बैठे हुए हैं,

लग रहा सारा जमाना,
दुश्मनी पर है उतारू,
इसकदर हर व्यक्ति से,
संबंध अब टूटे हुए हैं,

हो चली है आज मुझको अपने जीवन से वितृष्णा,
तुम भरो दृग–दृष्टि में तो आँख फिर सपने सजाए,
छोड़ कर मुझको गए सब, जो भी थे अपने–पराए,
तुम अगर अपना लो मुझको, ज़िन्दगी फिर मुस्कराए।

अब न जीवन–पंथ पर है,
रहनुमाँ कोई हमारा,
जो चले थे साथ मेरे,
कर गए मुझसे किनारा,

चाँदनी की बात छोड़ो,
साथ दे जो इस तिमिर में,
आसमाँ पर दूर तक,
दिखता नहीं ऐसा सितारा,

हर कदम पर ठोकरें खाकर दिशाभ्रम हो गया है,
थाम लो उँगली अगर तुम, पंथ ख़ुद मंजिल दिखाए,
छोड़ कर मुझको गए सब, जो भी थे अपने–पराए,
तुम अगर अपना लो मुझको, ज़िन्दगी फिर मुस्कराए।

लग रहा है मुझको जीवन,
मानो जलती लाश कोई,
चुभ रही सीने में जाकर,
साँस है या फाँस कोई,

जो गया दामन छुड़ाकर,
दर्द इतना दे गया वह,
अब नहीं होता है मुझको,
दर्द का एहसास कोई,

आज तुम ऐसे में आकर थाम लो यदि बाँह मेरी,
मेरी विधवा ज़िन्दगी फिर माँग में मोती सजाए,
छोड़ कर मुझको गए सब, जो भी थे अपने–पराए,
तुम अगर अपना लो मुझको, ज़िन्दगी फिर मुस्कराए।

...

गीत मेरे आवारा फिरते

अगर न करतीं तुम अपने अधरों के साथ सगाई इनकी,
जाने कितने जन्मों तक सब गीत मेरे आवारा फिरते।

ये जन्मे जिस रोज, तभी से–
घूम रहे हैं बंजारों से,
मोल लगाया गया न इनका,
जब गुजरे ये बाजारों से,

इन्हें जौहरी मिला न कोई,
जो कुछ इनका भाव परखता,
नहीं पट सका सौदा इनका,
दुनिया के साहूकारों से,

अगर स्नेह की पूँजी देकर नही किया कय होता तुमने,
किसी गुणी ग्राहक को अब तक इनके प्राण निहारा करते,
अगर न करतीं तुम अपने अधरों के साथ सगाई इनकी,
जाने कितने जन्मों तक सब गीत मेरे आवारा फिरते।

गली–गली ये भटक रहे थे,
नहीं किसी ने प्रीत दिखाई,
जिस पग से जाकर ये लिपटे,
उस पग से एक ठोकर खाई,

नज़र–नज़र ने करी अदावत,
अधर–अधर ने वह विष उगला,
नगर–नगर बदनाम हो गई,
इनकी भोली सी तरुणाई,

अगर न इनकी प्यास बुझाती आकर यह घन–दृष्टि तुम्हारी,
चातक बनकर एक बूँद जल को ये कहीं पुकारा करते,
अगर न करतीं तुम अपने अधरों के साथ सगाई इनकी,
जाने कितने जन्मों तक सब गीत मेरे आवारा फिरते।

कभी गया न आँसू कोई,
इनका थोड़ा दर्द बँटाकर,
कली–कली ने छेड़ा इनको,
उपवन में सौ बार बुलाकर,

इन्हें मिला उपहास इसकदर,
रूठ गए मेरे ये जाये,
अंतस में जाकर छुप बैठे,
ये सारा संसार भुलाकर,

अगर थाम कर इनकी उँगली न ले आतीं साथ इन्हें तुम,
जाने कबतक कालकोठरी में ये विवश गुजारा करते,
अगर न करतीं तुम अपने अधरों के साथ सगाई इनकी,
जाने कितने जन्मों तक सब गीत मेरे आवारा फिरते।

...

प्रिय! मौन बहुत उत्तर तेरे

हर गीत मुखर मेरा लेकिन, प्रिय! मौन बहुत उत्तर तेरे।

अपने भावाकुल प्राणों की,
मैने हर बात लिखी खुलकर,
कागज के टुकड़ों के ऊपर,
अर्पित हर साँस करी तुमपर,

लेकिन तेरा हर शब्द शांत,
हर पंक्ति लजीली दुल्हन–सी,
इकरार तेरा खामोश बहुत,
जैसे गम्भीर कोई सागर,

मेरी भाषा उन्मुक्त, मगर चुप–चुप हैं सब अक्षर तेरे,
हर गीत मुखर मेरा लेकिन, प्रिय! मौन बहुत उत्तर तेरे।

लिखते–लिखते थक गया मगर,
लिख सका न कुछ तुमको विशेष,
चुक गए शब्द हर बार मेरे,
पर हुई प्रणय–पाती न शेष,

लेकिन तुमने हर बात लिखी,
इतनी संक्षिप्त मुझे हरदम,
तेरी पाती में खोज रहा,
तेरे भावों को निर्निमेष,

मेरी वाणी उत्साह भरी, लेकिन नीरव सब स्वर तेरे,
हर गीत मुखर मेरा लेकिन, प्रिय! मौन बहुत उत्तर तेरे।

सुधि ने छेड़ी जब मनवीणा,
तब तुझ पर मैने लिखे गीत,
सुख–दुःख के, विरह–प्रणय वाले,
बेझिझक लिखे जब लिखे, मीत!

लेकिन निज भाव छुपातीं तुम,
मुख डाल लाज का अवगुण्ठन,
मैं क्या! सारा जग कहता है,
यह नेह–प्रेम की नहीं रीत,

यह लाज रहेगी बोलो न कब तक तेरा अन्तर घेरे,
हर गीत मुखर मेरा लेकिन, प्रिय! मौन बहुत उत्तर तेरे।

...

मौन प्रतीक्षारत बैठा हूँ

उर में पीड़ा, मन में एकाकीपन का एहसास लिए,
मौन प्रतीक्षारत बैठा हूँ होठों पर चिर प्यास लिए।

मधुवन में कर रहे सुमन संग,
अलि आकर सीनाजोरी,
बादल के संग खेल रही,
नभ पर बिजली चोरा–चोरी,

प्रवृफति–नटी ड्योढ़ी पर आकर,
ताने मार–मार निष्ठुर,
परिरंभण को उकसाती है,
दग्ध हृदय को बरजोरी,

प्रिय वंचित मेरी तरुणाई है हठात सन्यास लिए,
मौन प्रतीक्षारत बैठा हूँ होठों पर चिर प्यास लिए।

नीरवता में डूब गया है,
घर–आँगन–कोना–कोना,
जीवन को जीने का अब तो,
है एहसास हुआ बौना,

स्मृतियाँ ही सम्बल बनकर,
याद दिलाती हैं मुझको,
प्रिये! तुम्हारे साथ हुआ है,
मेरे गीतों का गौना,

कालचक्र पलटेगा एकदिन, एक यही विश्वास लिए,
मौन प्रतीक्षारत बैठा हूँ होठों पर चिर प्यास लिए।

कुटिल काल की चतुराई से,
छूटा है अपना संबंध,
कर्तव्यों की वेदी चढ़कर,
टूट गया अपना अनुबंध,

अश्रु भरे दोनों आँखों में,
मर्माहत महसूस करूँ,
जीवन के सुखसुमन तोड़कर,
किसने लूटी जीवन–गंध,

जीवन का कलरव फिरता है होठों पर परिहास लिए,
मौन प्रतीक्षारत बैठा हूँ होठों पर चिर प्यास लिए।

◆◆◆

मल दिया साजन ने हँसकर गुलाल

आँगन के बीच खड़ी
गोरी का गाल,
मल दिया साजन ने हँसकर गुलाल।।

भीज गया तन–मन
भीज गई सारी
सिहर उठा रोम–रोम
पुलक उठी नारी

विहँस हाथ में ली
पिचकारी सम्हाल,
फागुन में टूट गई पलकों की ढाल।
मल दिया साजन ने हँसकर गुलाल।।

खुशियों के साथ जली
होली की आग
पुरवा के झोंकों में
गूँज उठा फाग

डगर–उगर फैल गया
रंगों का जाल,
ढोलक पर झूम उठी सारी चौपाल।
मल दिया साजन ने हँसकर गुलाल।।

◆◆◆

फागुन के संकेत

नयनों में खिलने लगे, इन्द्रधनुष के रंग,
फागुन आते ही हुआ, मन उन्मुक्त पतंग।

पुरवाई जादू भरी, जब से लौटी गेह,
आँखों में साकार हैं, सारे स्वप्न विदेह।

जमी हुई थी बर्फ सी, होठों पर सौगंध,
मिली गुनगुनी धूप जब, टूट गए प्रतिबंध।

गुपचुप कानों में गए, गंध–दूत कुछ बाँच,
अंग–अंग को फूँकने, लगी अचीन्ही आँच।

फगुनाहट से हो गई, पथ की धूल अबीर,
आवारा मन ढूँढ़ने, लगा प्रेम–ज़ंजीर।

फागुन के संकेत से, लगा सिहरने गात,
तन–मन पर होने लगी, बिन बादल बरसात।

◆◆◆

शरद के दोहे

साँसों में बोने लगी, दुर्मद वायु बबूल,
धूप तमाशा देखती, ले निरपेक्ष उसूल।

ग्राम किशोरी सी हवा, लिए हाथ में सूप,
फटक–फटक कर बीनती, तप्त–सुनहरी धूप।

भरी दुपहरी में खड़ी, चुप–चुप धूप उदास,
बौनेपन का हो रहा, दिन को कटु आभास।

नैतिकता को भूलकर, दे सोने–सा रूप,
दिनकर बेचे हाट में, नित पीतल की धूप।

चार घड़ी के बाद जब, गहराई पहचान,
आकर्षण की डोर को, तोड़ गया दिनमान।

मौसम का कहता गणित, दिन का हीन वजूद,
रातों का विस्तार है, साहू का प्रिय–सूद।

हर संध्या सूरज लिखे, हँसकर गीत ललौंछ,
शीतहृदय रजनी मगर, बिना पढ़े दे पोंछ।

रात गुजारी आँख में, कर सपनों ने शोर,
घिरी कुहासे में मिली, आशाओं की डोर।

◆◆◆